इग्नू
जन-जन का
विश्वविद्यालय

BPAC-102

प्रशासनिक विचारक

सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय

विशेषज्ञ समिति

प्रो. सी.वी. राघुवुलू
पूर्व कुलपति, नागार्जुन विश्वविद्यालय
गुंटूर, (आंध्र प्रदेश)

प्रो. रमेश के. अरोड़ा
पूर्व प्रोफेसर, लोक प्रशासन विभाग,
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

प्रो. ओ.पी. मिनोचा
पूर्व प्रोफेसर, लोक प्रशासन, भारतीय
लोक प्रशासन संस्थान, नई दिल्ली

प्रो. अरविन्द के. शर्मा
पूर्व प्रोफेसर, लोक प्रशासन
भारतीय लोक प्रशासन संस्थान, नई दिल्ली

प्रो. आर. के. सप्रू
पूर्व प्रोफेसर, लोक प्रशासन
पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़

प्रो. साहिब सिंह भयाना
पूर्व प्रोफेसर, लोक प्रशासन पंजाब
विश्वविद्यालय, चंडीगढ़

प्रो. बी.बी. गोयल
पूर्व प्रोफेसर, लोक प्रशासन
पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़

प्रो. रविंदर कौर
लोक प्रशासन विभाग
उस्मानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद

प्रो. सी. वैकंटइया
डॉ. बी. आर. अम्बेडकर मुक्त
विश्वविद्यालय, हैदराबाद

प्रो. जी. पालनीथुराई
राजनीति विज्ञान एवं विकास प्रशासन
विभाग, गांधीग्राम ग्रामीण
विश्वविद्यालय, गांधीग्राम

प्रो. रमनजीत कौर जोहल
जोहल विश्वविद्यालय मुक्त शिक्षण
विद्यालय पंजाब विश्वविद्यालय,
चंडीगढ़

प्रो. राजबंस सिंह गिल
लोक प्रशासन विभाग
पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला

प्रो. मंजुशा शर्मा
लोक प्रशासन विभाग कुरुक्षेत्र
विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र

प्रो. लालनी हीज़ोवी
लोक प्रशासन विभाग, मिज़ोरम सेन्ट्रल
विश्वविद्यालय, एज़वाल

प्रो. नीलिमा देशमुख
पूर्व प्रोफेसर, लोक प्रशासन
राष्ट्रसंत टुकादोजी महाराज नागपुर
विश्वविद्यालय, नागपुर

प्रो. राजवीर शर्मा
पूर्व वरिष्ठ सलाहकार, लोक प्रशासन
संकाय, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ,
इग्नू, नई दिल्ली

प्रो. संजीव कुमार महाजन
लोक प्रशासन विभाग, हिमाचल प्रदेश
विश्वविद्यालय, शिमला

प्रो. मनोज दीक्षित
लोक प्रशासन संकाय
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

प्रो. सुधा मोहन
नागरिक व राजनीति विभाग
मुंबई विश्वविद्यालय, मुबंई

इग्नू संकाय

प्रो. प्रदीप साहनी

प्रो. ई. वायुनंदन

प्रो. उमा मेडूरी

प्रो. अलका धमेजा

प्रो. डॉली मैथ्यू

प्रो. दुर्गेश नन्दिनी

सलाहकार

डॉ. संध्या चोपड़ा
डॉ. ए. सेंथमिल कनल

संयोजक

प्रो. डॉली मैथ्यू
प्रो. दुर्गेश नन्दिनी

पुनरीक्षक

डॉ. संध्या चोपड़ा

पाठ्यक्रम समन्वयन : प्रो. अलका धमेजा सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली

पाठ्यक्रम संपादक : प्रो. अलका धमेजा सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली

बी.पी.ए.सी. 132 प्रशासनिक विचारक

खंड 1 भारतीय विचारक

इकाई 1	कौटिल्य	डॉ. राजवीर शर्मा, पूर्व वरिष्ठ सलाहकार, लोक प्रशासन संकाय, एस.ओ.एस.एस., इग्नू, नई दिल्ली अनुवादक : योगम दत्ता, संकाय सदस्य, दिल्ली विश्वविद्यालय
इकाई 2	महात्मा गांधी	डॉ. विजय श्रीवास्तव, सहायक प्रोफेसर, मित्तल स्कूल ऑफ बिजनेस, लवली प्रोफेशनल विश्वविधालय, फगवाड़ा, पंजाब अनुवादक : तानिमा दत्ता, सहायक प्रोफेसर, मित्तल स्कूल ऑफ बिजनेस, लवली प्रोफेशनल विश्वविद्यालय, फगवाड़ा, पंजाब

खंड 2 क्लासिकी विचारक

इकाई 3	वुडरो विल्सन	सुश्री संधमित्रा नाथ, सहायक प्रोफेसर, बजकुल मिलानी महाविद्यालय, विद्यासागर विश्वविद्यालय, पश्चिमी बंगाल अनुवादक : आर. के. पाण्डे
इकाई 4	फ्रडरिक डब्ल्यू टेलर	डॉ. वैशाली नरूला, सहायक प्रोफेसर, कमला नेहरू कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली अनुवादक : आर. के. पाण्डे
इकाई 5	हेनरी फेयोल	डॉ. वैशाली नरूला, सहायक प्रोफेसर, कमला नेहरू कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली अनुवादक : आर. के. पाण्डे
इकाई 6	मैक्स वेबर	डॉ. आर. अनीता, पूर्व संकाय सदस्य, राजीव गांधी नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ यूथ डेवलपमेंट (आर.जी.एन.आई.वाई.डी.) श्रीपेरूम्बुदूर, तमिलनाडु अनुवादक : डॉ. राजवीर शर्मा, पूर्व वशिष्ठ सलाहकार, लोक प्रशासन संकाय, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली
इकाई 7	मैरी पार्कर फोलेट	डॉ. ए. सेंथमिल कनल, सलाहकार, लोक प्रशासन संकाय, एस.ओ.एस.एस., इग्नू, नई दिल्ली अनुवादक : आर. के. पाण्डे

खंड 3 व्यवहारिक और प्रणाली विचारक	
इकाई 8 एल्टन मेयो	प्रो. उमा मेडुरी, लोक प्रशासन संकाय, एस.ओ.एस.एस., इग्नू, नई दिल्ली अनुवादक : आर. के. पाण्डे
इकाई 9 चेस्टर बरनार्ड	डेजी शर्मा, सहायक प्रोफेसर, लोक प्रशासन विभाग, राजस्थान विश्वविधालय, जयपुर, राजस्थान अनुवादक : प्रतिभा रानी, संकाय सदस्य, इग्नू, नई दिल्ली
इकाई 10 हरबर्ट ए. साईमन	डॉ. ए. सेंथमिल कनल, सलाहकार, लोक प्रशासन संकाय, एस.ओ.एस.एस., इग्नू, नई दिल्ली अनुवादक : ज्योति मलिक, संकाय सदस्य, इग्नू, नई दिल्ली
खंड 4 सामाजिक – मनोवैज्ञानिक विचारक	
इकाई 11 अब्राहम मॉस्लो	डॉ. संध्या चोपड़ा, सलाहकार, लोक प्रशासन संकाय, एस.ओ.एस.एस., इग्नू, नई दिल्ली अनुवादक : ज्योति मलिक, संकाय सदस्य, इग्नू, नई दिल्ली
इकाई 12 रेन्सिस लिकर्ट	डॉ. आर. अनीता, पूर्व संकाय सदस्य, राजीव गांधी नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ यूथ डेवलपमेंट (आर.जी.एन.आई.वाई.डी.) श्रीपेरूम्बुदूर तमिलनाडु अनुवादक : डॉ. राजवीर शर्मा, पूर्व वशिष्ठ सलाहकार, लोक प्रशासन संकाय, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली
इकाई 13 फ्रडरिक हर्जबर्ग	प्रो. अलका धमेजा, लोक प्रशासन संकाय, एस.ओ.एस.एस., इग्नू, नई दिल्ली अनुवादक : प्रतिभा रानी, संकाय सदस्य, इग्नू, नई दिल्ली
इकाई 14 क्रिस आरगाइरिस	डॉ. सेंथिल नाथन, एच .ओ .डी , लोक प्रशासन विभाग , श्री कृष्णा कॉलेज ऑफ आर्टस और साइंस, कोयम्बटूर, तमिलनाडु अनुवादक : ज्योति मलिक संकाय सदस्य, इग्नू, नई दिल्ली
खंड 5 प्रबंधन और लोक नीति विचारक	
इकाई 15 ड्वाइट वाल्डो	सुश्री सधंमित्रा नाथ, सहायक प्रोफेसर, बजकुल मिलानी महाविद्यालय, विद्यासागर विश्वविद्यालय, पश्चिमी बंगाल अनुवादक : डॉ. राजवीर शर्मा, पूर्व वशिष्ठ सलाहकार, लोक प्रशासन संकाय, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली
इकाई 16 पीटर ड्रकर	डॉ. संध्या चोपड़ा, सलाहकार, लोक प्रशासन संकाय, एस.ओ.एस.एस., इग्नू, नई दिल्ली अनुवादक : प्रतिभा रानी, संकाय सदस्य, इग्नू, नई दिल्ली
इकाई 17 येहजकेल ड्रोर	सुश्री डेजी शर्मा, सहायक प्रोफेसर, लोक प्रशासन विभाग, राजस्थान विश्वविधालय, जयपुर, राजस्थान अनुवादक : डॉ. राजवीर शर्मा, पूर्व वशिष्ठ सलाहकार, लोक प्रशासन संकाय, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली

मुद्रण उत्पादन

श्री राजीव गिरधर	हेमन्त कुमार परिदा	श्री अरविंदर चावला
सहायक कुलसचिव (प्रकाशन)	अनुभाग अधिकारी (प्रकाशन)	ग्राफिक डिजाइनर
एम.पी.डी.डी, इग्नू, नई दिल्ली	एम.पी.डी.डी, इग्नू, नई दिल्ली	नई दिल्ली

कवर डिजाइन संकल्पना :डा. संध्या चोपड़ा, सलाहकार, लोक प्रशासन संकाय, सामाजिक विज्ञान, विद्यापीठ इग्नू, नई दिल्ली

दिसंबर 2019

© इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, 2019

ISBN : 978-93-89668-77-3

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस कार्य का कोई भी अंश इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में मिमियोग्राफ (मुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के बारे में और अधिक जानकारी विश्वविद्यालय के कार्यालय, मैदानगढ़ी,, नई दिल्ली–110 068 से प्राप्त की जा सकती है।

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की ओर से कुलसचिव, एमपीडीडी द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित ।

लेजर कम्पोजिंग : राजश्री कम्प्यूटर्स, V-166A, भगवती विहार, (नजदीक सेक्टर–2, द्वारका), उत्तम नगर, नई दिल्ली–110059
मुद्रक : ऐजुकेशनल स्टोर्स, एस–5 बुलंदशहर रोड इंडस्ट्रियल एरिया साईट–1 गाजियाबाद (उ.प्र.)

विषय सूची

प्रस्तावना		**3**
खंड 1	**भारतीय विचारक**	
इकाई 1	कौटिल्य	11
इकाई 2	महात्मा गांधी	31
खंड 2	**क्लासिकी विचारक**	
इकाई 3	वुडरो विल्सन	45
इकाई 4	फ्रेडरिक डब्ल्यू. टेलर	55
इकाई 5	हेनरी फेयोल	65
इकाई 6	मैक्स वेबर	75
इकाई 7	मैरी पार्कर फोलेट	91
खंड 3	**व्यवहारिक और प्रणाली विचारक**	
इकाई 8	एल्टन मेयो	105
इकाई 9	चेस्टर बरनार्ड	115
इकाई 10	हरबर्ट ए. साईमन	126
खंड 4	**सामाजिक–मनोवैज्ञानिक विचारक**	
इकाई 11	अब्राहम मॉस्लो	143
इकाई 12	रैंसिस लिकट	152
इकाई 13	फ्रेडरिक हर्जबर्ग	171
इकाई 14	क्रिस आरगाईरिस	183
खंड 5	**प्रबंधन और लोक नीति विचारक**	
इकाई 15	ड्वाइट वाल्डो	199
इकाई 16	पीटर ड्रकर	208
इकाई 17	येहजकेल ड्रोर	221
सजेशन रिडिंग		

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

पाठ्यक्रम प्रस्तावना

प्रशासनिक विचारक पर यह पाठ्यक्रम आप सभी को विचारकों और प्रशासकों के संगठनों की कार्यप्रणाली पर विचारों से परिचित कराता है। साथ ही श्रमिकों और पर्यावरण पर उनका क्या प्रभाव पड़ता है, उससे भी अवगत कराता है। व्यवहारिक, प्रणाली, नव-क्लासिकी, नीति और प्रबंधन विचारकों पर विचार विमर्श करने से पहले यह भारतीय विचारकों और दार्शनिकों जैसे कौटिल्य व महात्मा गांधी के दृष्टिकोणों का विश्लेषण भी करता है। **भारतीय विचारकों** के तहत, जो खंड 1 है, कौटिल्य द्वारा 'अर्थशास्त्र' की प्रशासनिक प्रणाली पर चर्चा पाठ्यक्रम का मुख्य आकर्षण है, क्योंकि प्रशासनिक सिद्धातों के बहुत कम पाठ्यक्रम कौटिल्य के विचारों को इस तरह विस्तार से सामने लाते हैं। कौटिल्य ने संगठनात्मक कार्यों में लगे लोगों के मूल्यों और दृष्टिकोण, योग्यता और गुणों के महत्व की कल्पना की। सत्यनिष्ठा, अखंडता और ईमानदारी के सिद्धांतों पर उनका विचार आज भी प्रांसगिकता रखता है। गांधी के स्वराज और ट्रस्टीशिप (Trusteeship) के सिद्धांतों की भी खंड 1 की इकाई 2 में चर्चा की गई है। पंचायती राज और विनोभा भावे के भूदान आंदोलन जैसे प्रयोग, जो गांधी की विचारधाराओं का अनुभवजन्य परीक्षण करते हैं, उन पर चर्चा की गई है।

खंड 2 **क्लासिकी विचारक** की इकाई 3 वूडरो विल्सन' की राजनीति-प्रशासन द्विभागीकरण की प्रासंगिकता की व्याख्या करती है। इकाई 3 में राजनीतिक प्रश्नों से अलग विल्सन के प्रशासनिक प्रश्नों के विचारों पर ध्यान केंद्रित करती है, और लोक प्रशासन के राजनीतिकरण की प्रवृतियों और राजनीति की नौकरशाही की प्रवृतियों पर नियन्त्रण रखने की आवश्यकता पर चर्चा करती है। 'फ्रेडरिक डब्ल्यू' टेलर इकाई 4 है। यह टेलर की समय और गति के अध्ययन की कार्यप्रणाली, शॉप फलोर (निम्नस्तरीय) प्रबंधन, मात्रात्मक अवकल प्रणाली, सोल्डरिग या टाकांअकिकरण, कार्यात्मक फोरमेनशिप और संगठन के कार्यों को मानकीकृत करने में मानसिक क्रांति पर विचार विमर्श करती है। इकाई 5 'हेनरी फेयोल' पर है, जो उसके सिद्धांत की जांच पड़ताल करता है, जो व्यापक रूप से एकता के आदेश के सिद्धांत, तर्कसंगत रूपरेखा और सगंठनात्मक सशक्तिकरण पर आधारित है। इकाई फेयोल के चौदह सिद्धांतों की व्याख्या करती है, जिसका उपयोग संगठनात्मक संरचनाओं और प्रक्रियाओं के नियोजन और विकास में किया जाता है।

इकाई 6 का शीर्षक 'मैक्स वेबर', है। यह वेबर नौकरशाही मॉडल, जो वेबर द्वारा प्रतिपादित है, उसकी व्याख्या करती है। पारंपरिक, करिश्माई और कानूनी युक्तियों मे प्राधिकरण को वर्गीकृत करके, वेबर ने नौकरशाही की कुछ विशिष्ट विशेषताओं जैसे औपचारिक भूमिकाओं, नियमों और विनियमों को तैयार किया, जो आज तक प्रांसगिकता रखते है। खंड 2 की इकाई 7 'मेरी पार्कर 'फोलेट' पर है। यह आप को मेरी पार्कर फोलेट द्वारा सगंठन और प्रबंधन के क्षेत्र में किए गए कुछ महत्वपूर्ण योगदानों से परिचित कराती है। विशेष रूप से, संघर्ष संकल्प, आदेश, शक्ति प्राधिकरण और नियंत्रण, योजना और समन्वय और नेतृत्व के साथ उनकी अवधारणाओं से अवगत कराती है।

खंड 3 का शीर्षक **'व्यवहारिक और प्रणाली विचारक**' है। इसकी इकाई 8 'ऐल्टन मेयो' पर है, जो मेयो के अध्ययन के परिणामों को सामने लाता है, जो औद्योगिक उत्पादकता में योगदान देने वाली एक महत्वपूर्ण प्रबंधन शैली के उद्भव को चिह्नित करते हैं। यह इकाई अपने हार्थोन प्रयोगों के महान प्रकाशीकरण, प्रसारण असेम्बली (Great Illumination, Relay Assembly), साक्षात्कार कार्यक्रम और बैंक तारीकरण (Interviewing Programme and Bank Wiring) के स्पष्टीकरण द्वारा संगठन के लिए पारस्परिक कौशल और मानवतावादी दृष्टिकोण की विशेषताओं के विषय में बताती है।

'चेस्टर बरनार्ड' खंड की इकाई 9 है। चेस्टर बरनार्ड ने एक सामाजिक प्रणाली के रूप में संगठन को पहचानने और विश्लेषण करने में प्रणाली दृष्टिकोण का उपयोग करने के लिए अभूतपूर्व योगदान दिया है। इस इकाई में बरनार्ड की प्राधिकरण की कथा की अवधारणाओं, उदासीनता के क्षेत्र, सहयोग और योगदान-संतुष्टि संतुलन की व्याख्या करती है। इकाई 10 'हरबर्ट साईमन' पर है, जिन्हें व्यवहारिक दृष्टिकोण का प्रमुख प्रस्तावक माना जाता है। इकाई 'प्रशासनिक व्यवहार', 'सीमित तर्कसंगतता (Bounded Rationality), 'संतोषजनक व्यवहार', 'बुद्धि की भूमिका', 'डिज़ाइन व चयन की गतिविधियों' पर साईमन के विचारों की व्याख्या करती है।

खंड 4 **सामाजिक-मनोवैज्ञानिक विचारक** पर है। यह अब्राहम मॉस्लो, रेनसिस लिकर्ट, फ्रेडरिक हर्जबर्ग और क्रिस आरगाईरिस के योगदानों की विवेचना करता है। संगठनों मे प्रेरणा को देखने के तरीके पर इन सिद्धांतों ने एक महत्वपूर्ण प्रभाव डाला है। इकाई 11 अब्राहम मॉस्लो की आवश्यकताओं के सिद्धांत के पदानुक्रम की जांच करती है। शारीरिक, सामाजिक, सुरक्षा, स्वयं-सिद्धि के लिए सम्मान जरूरतों की उनकी प्रगति का विश्लेषण इस इकाई में किया गया है। इकाई 12 रैसिंस लिकर्ट पर है। यह सगठनांत्मक अभिनेताओं की भूमिका, उनकी एक-दूसरे के साथ पारस्परिक क्रियाओं और समग्र कार्यस्थल कार्यों पर उनके प्रभाव की व्याख्या करती है। इस इकाई में लिकर्ट रैंसिस ने और प्रणाली 5 पर लिकर्ट की अवधारणाएं है। 'फ्रेडरिक हर्जबर्ग' इकाई 13 है। यह उस महत्व से संबंधित है, जहाँ हर्जबर्ग एक संगठन में व्यक्तियों की पसंद और इच्छाओं से जुड़ा हुआ है। इकाई उसके स्वच्छता और 'प्रेरक' के दो कारक सिद्धांत की व्याख्या करती है, जो अलग-अलग संगठनात्मक स्तरों पर मानवीय आवश्यकताओं से जुड़े प्रेरकों के पहले से उपलब्ध विकल्पों पर काम करता है। इकाई 14 का शीर्षक 'क्रिस आरगाईरिस' है। यह इकाई आरगाईरिस की परिपक्व-अपरिपक्व, पारस्परिक क्षमता में सुधार, वैकल्पिक संगठनात्मक सरचनाओं, टी-समूह और संगठनात्मक ज्ञान की अवधारणाओं की जांच करती है।

खंड 5 **प्रबंधन और लोक नीति विचारकों** पर है, जो नवीन लोक प्रशासन के क्षेत्रों में विकास, उद्देश्यों, प्रशिक्षण सगंठनों और नीति विज्ञान द्वारा प्रबंधन पर प्रकाश डालता है। खंड की इकाई 15 'डवाईट वाल्डो' है। विकास प्रशासन के एक सिद्धांत को विकसित करने के लिए 'डवाईट वाल्डो' की मांग को सामने लाती है और संघर्ष पर उसका ध्यान केंद्रित करती है। नौकरशाही और लोकतंत्र के बीच और मूल्य-आधारित सार्वजनिक प्रशासन, जो आज भी परिवर्तन-उन्मुख, लक्ष्य उन्मुख और नैतिकता की प्रतिध्वनि को संभालता है, उस पर प्रकाश डालती है। इकाई 16 'पीटर ड्रकर' के लेखन की जांच करती है, जिसने 20वीं शताब्दी के उत्तरार्ध के कई प्रमुख विकास की भविष्यवाणी की है, जिसमे निजीकरण और विकेंद्रीकरण, बाज़ारीकरण का निर्णायक महत्व और सूचना समाज का उदय सम्मिलित है। उद्देश्य से प्रबंधन की उनकी अवधारणा, S.M.A.R.T प्रबंधन, पुनर्निर्माण, प्रतिनिधिमंडल को स्पष्ट करती है। इकाई 17 'येहज़कल ड्रोर' खंड की अंतिम इकाई है, जो उपलब्ध सूचनाओं और वैज्ञानिक प्रौद्योगिकी के अधिकतम उपयोग के आधार पर लक्ष्यों, मूल्यों, विकल्पों, लागतों, लाभों के विवेकपूर्ण मूल्यांकन द्वारा 'येहजकेल ड्रोर' की सर्वोत्तम नीति को अपनाने से संबंधित है। ड्रोर की नीति विश्लेषण का उपयोग, व्यवहारिक विज्ञान और प्रणाली दृष्टिकोण और उसकी नीति विज्ञान को लेकर बहु-अनुशासनात्मक दृष्टिकोण पर भी इस इकाई में विचार विमर्श किया गया है।

खंड 1

भारतीय विचारक

इकाई 1 कौटिल्य*

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 कौटिल्य और अर्थशास्त्र : एक परिचय

1.3 लोक प्रशासन के सिद्धांत

1.4 प्रशासनिक व्यवस्था का संगठन और संरचना

1.5 कार्मिक प्रशासन

1.6 वित्तीय प्रशासन

1.7 निष्कर्ष

1.8 शब्दावली

1.9 संदर्भ लेख

1.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप निम्न को समझ सकेंगे:

- प्रशासन के सिद्धांतों के संबंध में कौटिल्य के विचार;
- कौटिल्य के समय में सरकारी यंत्र या व्यवस्था की संरचना और प्रतिमान;
- वित्तीय और कार्मिक प्रशासन के पहलुओं के संबंध में कौटिल्य के विचार; और
- वर्तमान समय में लोक प्रशासन के अध्ययन में कौटिल्य की प्रासंगिकता।

1.1 प्रस्तावना

अर्थशास्त्र समग्र सरकारी गतिविधियों पर सबसे प्राचीन शोध प्रबंध है। इस ग्रंथ का वर्णन एक उत्कृष्ट रचना के रूप में किया गया है, जिसका संबंध विस्तृत विषयों से है, जैसे राजकौशल और लोक प्रशासन के मुद्दे, जिसमें राजनीति, अर्थशास्त्र और प्रशासन शामिल है। अर्थशास्त्र द्वारा विकसित और स्थापित शासन और राजकौशल के सिद्धांतों का अनुसरण भारत के अनेक शासकों ने किया जैसे अशोक और शिवाजी। जैसा कि अनेक विद्वानों द्वारा अवलोकन किया गया है, कौटिल्य की महिमा इसमें है कि उनके अर्थशास्त्र में अंतर्विष्ट (शामिल) सिद्धांतों को उन्होंने इस योग्य बनाया कि वे आज भी प्रासंगिक और उपयोगी हैं। इस इकाई में प्रशासन के संबंध में कौटिल्य के आधारभूत सिद्धांतों पर ध्यान केंद्रित किया जाएगा और समकालीन संदर्भ में उनकी प्रासंगिकता का परीक्षण किया जाएगा।

---

*_योगदान_ : प्रो. राजवीर शर्मा, पूर्व वरिष्ठ सलाहकार, लोक प्रशासन संकाय, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली

1.2 कौटिल्य और अर्थशास्त्र : एक परिचय

कौटिल्य ने, जो चाणक्य और विष्णुगुप्त के नाम से भी जाने जाते हैं, राजनीति शास्त्र, अर्थशास्त्र, प्रबंधन, लोक प्रशासन, मनोविज्ञाान, रक्षा अध्ययन और सामाजिक विज्ञान के क्षेत्रों से अनेक विद्वानों का ध्यान आकर्षित करने के लिए प्रसिद्ध हैं। उन्होंने इस महान् अर्थशास्त्र शोध-प्रबंध की रचना उस समय की जब सरकार का स्वरूप राजतंत्र था और शासकों से अपेक्षा की जाती थी कि वे केवल अपने प्रदेशों की रक्षा ही नहीं, बल्कि युद्ध तथा उनमें विजय प्राप्ति द्वारा क्षेत्रीय सीमाओं का विस्तार भी करे। राज्य तथा उसके यंत्र (उपकरण) की अपनी समीक्षा की प्रक्रिया में कौटिल्य ने एक राज्य/सरकार के संचालन के अनेक पहलुओं पर अपना ध्यान केन्दित किया। उन्होंने एक सशक्त राज्य के विचार का समर्थन किया जो केवल तभी संभव हो सकता था जब शासक या राजा शक्तिशाली हो। इसे संभव बनाने के लिए, उन्होंने अनेक पूर्वापेक्षाओं (पूर्वशर्ते) को निर्धारित किया, जैसे कि भौतिक, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, नैतिक और प्रशासनिक। परन्तु अर्थशास्त्र की विस्तार से चर्चा करने से पहले कौटिल्य से संबंधित कुछ बहसों और विवादों के बारे में जानकारी प्राप्त करना उपयुक्त होगा।

उनके और उनकी कृति के संबंध में दो मुख्य विवाद है। एक का संबंध काल (समय) से है और दूसरे का कर्तृत्व या स्त्रोत से है। दूसरे अर्थों में, बहस का संबंध कृति की मौलिकता से है और इस बात से है कि क्या इसने अपने नियत काल की वास्तविक सरकारी प्रणाली और प्रशासन को प्रतिबिम्बित किया। इस संबंध में, अनेक इतिहासकारों के विविध विचार हैं कि क्या अर्थशास्त्र वास्तव में कौटिल्य द्वारा लिखा गया था या फिर उन्होंने पुस्तक को केवल संकलित किया था। परन्तु इस इकाई की सीमा/परिधि यहाँ हमें इस बहस में जाने की छूट नहीं देती। इस इकाई का केन्द्रबिन्दु आपको प्रधानरूप से अर्थशास्त्र के अर्थ से परिचित कराना है। जहाँ तक अर्थशास्त्र की बनावट या संघटन का संबंध है, इसमें लगभग 6000 सूत्र हैं, जिन्हें 15 पुस्तकों, 150 अध्यायों और 180 भागों या खडों में विभाजित किया गया है। यदि इन 15 पुस्तकों को पंक्तिबद्ध करने का प्रयास किया जाए, तो निम्नलिखित क्रम में प्रस्तुत किया जा सकता है:

- पुस्तक संख्या 1 शासन और प्रबंधन के मूल सिद्धांतों पर है, जबकि अर्थशास्त्र पुस्तक संख्या 2 का हिस्सा है, तत्पश्चात् पुस्तक संख्या 4 और 5 कानून पर हैं और पुस्तक संख्या 6, 7 और 8 का विषय विदेश नीति है।
- रक्षा, युद्ध और संघर्ष पुस्तक संख्या 9 से लेकर 14 तक के विचार-विमर्श का हिस्सा है और पुस्तक संख्या 15 ग्रंथ के लेखन में प्रयोग किए गए प्रणाली विज्ञान और उपायों के बारे में है।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है, पुस्तक की मौलिकता के बारे में विविध मत हैं, उदाहरण के लिए, क्या ग्रंथ के प्रथम रचनाकार कौटिल्य थे। यद्यपि एक सामान्य सहमति अभी पकड़ में नहीं है, यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि कौटिल्य ने कभी यह दावा नहीं किया कि उनसे पहले किसी ने इस विषय पर कुछ नहीं लिखा। कौटिल्य स्वयं अनेक रचनाकारों का उल्लेख करते हैं, जिनमें भारद्वाज, विसालक्स, परासर, मनु और कौनपदंता (Bhardwaj, Visalaksa, Parasara, Manu and Kaunpadanta) शामिल है, परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि उन्होंने शासन, प्रबंधन और राजकौशल के प्रति कोई मौलिक योगदान नहीं दिया। हम इस निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं कि कौटिल्य ने अर्थशास्त्र के रूप में एक सर्वश्रेष्ठ या महान् कृति की रचना की। आइए अब उनके द्वारा स्पष्ट किए गए सिद्धांतों और अवधारणाओं का विवेचन करें।

1.3 लोक प्रशासन के सिद्धांत

आरंभ में ही यह स्पष्ट करना प्रासंगिक होगा कि कौटिल्य ने प्रशासन के किन्हीं भी सिद्धांतों की चर्चा अपनी किसी भी पुस्तक में नहीं की जो अर्थशास्त्र का हिस्सा हैं। अतः सिद्धांत के संबंध में चर्चा केवल उन सिद्धांतों तक सीमित होगी, जो उनकी कृत में अनुमानिक हैं। यह सुप्रसिद्ध है कि कुछ निश्चित सार्वभौमिक रूप से लागू किए जाने वाले सिद्धांतों पर आधारित लोक प्रशासन के विज्ञान की खोज का श्रेय कुछ शास्त्री या क्लासिकी विचारकों को पहुँचता है। उदाहरण के लिए, लूथर गुलिक (Luther Gulick) और एल. उर्विक (L.Urwick) ने आग्रह किया कि मितव्ययता और कार्यकुशलता केवल तभी हासिल की जा सकती है, जब एक संगठन का मार्गदर्शन कुछ पूर्व निर्धारित मानकों और क्रियात्मकता के मापदंडों द्वारा हो। गुलिक के नाम से जुडी चौदह सिद्धांतों की और उर्विक के नाम से जुडी सात सिद्धांतों की एक प्रसिद्ध सूची है। यह इकाई, कौटिल्य द्वारा दिए गए सिद्धांतों को समझने के लिए, इनमें से कुछ सिद्धांतों पर विस्तृत विचार करती है:

- **कार्य का विभाजन (Division of Work)**

कार्य का विभाजन अथवा जो श्रम के विभाजन के नाम से जाना जाता है एक ऐसा सिद्धांत है जिसका संबंध एक संगठन की कार्यकुशलता और प्रभावशालिता से है। कौटिल्य कार्य को भी अनेक विभागों में बाँटते हैं, जो भिन्न-भिन्न व्यक्तियों को उनकी विशेषता और ज्ञान के अनुसार भिन्न-भिन्न भूमिकाएँ निर्दिष्ट करने के महत्व का सूचक है, ताकि वह व्यक्ति अपना नियत कार्य एक विवेकपूर्ण और लाभदायक तरीके से निभा सके। सरकारी यंत्र की संरचना यह दर्शाती है कि कौटिल्य ने कार्य को 34 विभागों में बांटा और प्रत्येक विभाग की अध्यक्षता एक निर्धारित अधिकारी द्वारा की गई।

पदानुक्रम (Hierarchy) अर्थशास्त्र में प्रशासनिक ढाँचा एक अधिकारीतांत्रिक (नौकरशाही) प्रकार के प्रशासन का वर्णन करता है, जिसका स्वरूप पदानुक्रमिक है। संगठनीय पिरामिड (Pyramid) के शिखर पर राजा था, जिसमें समस्त सत्ता का संग्रह था। अधीनस्थ स्तरों का संचालन उन अधिकारियों द्वारा किया जाना था, जिन्हें 'महामात्य', 'अमात्य', 'अध्यक्ष' के नाम से जाना जाता था। परंतु ग्रंथ में अधीनस्थ कर्मचारियों के बीच पदानुक्रम प्रणाली की स्पष्ट चर्चा नहीं मिलती है। उदाहरण के लिए, महामात्य और सेनापति अथवा अध्यक्ष के बीच वरिष्ठ-अधीनस्थ का संबंध स्पष्टतया स्थापित नहीं किया गया है। इसके बावजूद, इस बात पर बल देना आवश्यक है कि पदानुक्रम के भीतर पदोन्नति का निर्धारण योग्यता और पदों के लिए उपयुक्तता द्वारा किया जाता था।

- **निर्देशों में एकता (Unity of Command)**

साम्राज्य के सभी कर्मचारियों को केवल एक सत्ता से निर्देश लेने थे, अर्थात राजा से। सरकार के किसी भी स्तर पर इस संबंध में कोई भ्रम नहीं था कि केवल राजा के पास किसी भी विभाग या पद पर कार्यरत अधिनस्थों को निर्देश देने की शक्ति थी। यह स्पष्ट भाषा में सिद्ध नहीं किया गया है कि ऐसे निर्देश की सूचना प्रत्यक्ष थी अथवा किसी अन्य अधिकारी के माध्यम से थी। उदाहरण के लिए, कौटिल्य ने इस प्रश्न को संबोधित नहीं किया है कि क्या राजा हाथियों के विभाग के अध्यक्ष से प्रत्यक्ष बातचीत करता था या फिर सेनापति अथवा महामात्य के माध्यम से सूचित करता था।

- **केन्द्रीकरण (Centralisation)**

तथ्यात्मक दृष्टि से, सभी शक्तियाँ-विधानपालिका, कार्यपालिका और न्यायिक, राज के पद में निहित थीं। केन्द्रीकरण वास्तव में प्रशासन का संगठनकारी सिद्धांत था। परन्तु केन्द्र

द्वारा निर्मित नीतियों और निर्णयों के कार्यान्वयन के लिए जमीनी स्तर पर प्रशासन का संगठन भी केन्द्र की सूक्ष्म निगरानी में किया जाता था। साम्राज्य को प्रशासनिक दृष्टि से प्रांतों में विभाजित किया गया अैर प्रांतीय प्रशासन का विभाजन जिला और ग्राम तथा नगर पालिका प्रशासन में किया गया। प्रदेश प्रांतीय प्रशासन का अध्यक्ष था जबकि स्थानिक स्थानीय (जिले) की अध्यक्षता करता था और नगर प्रशासन की देखभाल, अनेक गोपों की सहायता से, नागरिक करता था। ग्रामीण प्रशासन गोप नामक कर्मचारी की देख-रेख में था।

कौटिल्य के लिए, साम्राज्य की सुरक्षा, बचाव और समृद्धि तथा राजा के प्रति प्रशासनिक निष्ठा के हित में सत्ता तथा निर्णय की प्रक्रिया का केन्द्रीकरण अनिवार्य था। कृषि को प्रोत्साहन, आँकडों का संग्रह और अनुरक्षण (रख-रखाव) उत्पादन तथा खनन को प्रोत्साहन तथा मंडी स्थलों के निर्माण ने भी सत्ता के केन्द्रीकरण को स्वीकृति दी। कौटिल्य ने स्थिरता और व्यवस्था, सामाजिक कल्याण और भौतिक समृद्धि को महत्वपूर्ण मूल्य प्रदान किया , जो उनकी दृष्टि में शासन की केन्द्रीकृत प्रणाली द्वारा प्राप्त की जा सकती थी।

एक विशाल साम्राज्य में, सुदूर बैठे हुए राजा को जिला या प्रांत जैसे सरकार के निम्नतर सोपानक्रम में प्रचलित स्थिति के लिए उपयुक्त उचित निर्णय लेना होता था। यह राजा द्वारा सहभागी नियम निर्माण के माध्यम से संभव था। दो कदम इस निर्णय प्रक्रिया के हिस्से थे। एक, निर्णय लेने से पहले, राजा को मंत्रिपरिषद जैसे अधिकारियों से परामर्श करना होता था और दूसरा, राजा को निचले स्तरों से जानकारी प्राप्त करनी होती थी, जैसे राजा द्वारा निपटारे के लिए विचाराधीन विषय से संबंधित जानकारी। यह व्यवस्था इसलिए कायम की गई थी, ताकि निर्णय लिए जाने वाले विषय के बारे में वास्तविक समझ प्राप्त हो।

- **सत्ता तथा उत्तरदायित्व (Authority and Accountability)**

सत्ता और जिम्मेदारी साथ साथ चलते हैं। शायद इसी कारण से राज्य की सारी शक्तियाँ राजा में निहित ही नहीं, बल्कि अपनी प्रजा की प्रगति और खुशहाली के लिए उसे ज़िम्मेदार भी बनाया गया है। उससे अपेक्षा की जाती है कि वह इस लक्ष्य की प्राप्ति सत्ता के समुचित प्रयोग द्वारा करेगा। अधिकार की एक प्रणाली में कौटिल्य का विश्वास था। उन्होंने प्रजा तथा सरकारी कार्यकर्ताओं, दोनों द्वारा किए गए अपराधों के लिए अनेक प्रकार के दण्ड निर्धारित किए। इस तथ्य पर सभी प्रशासनिक विचारकों और व्यवसायियों ने बल दिया है कि लोक अधिकारी को कानून तथा उस संस्था जिसका वह सदस्य है, दोनों के प्रति उत्तरदायी होना चाहिए। परन्तु, एक अधिकारी के कार्य या कृत्यों के लिए जिम्मेदारी को मात्र एक कानूनी ढाँचे के संदर्भ में न देखकर, उसका मूल्यांकन व्यावसायिक आचरण और नीति-शास्त्र के प्ररिप्रेक्ष्य से करना होगा, जिसमें यह भी शामिल होगा कि किस सीमा तक एक कर्मचारी का कार्य या बर्ताव प्रजा के बीच न्याय, समदृष्टि और नैतिकता को प्रोत्साहित करता है, अथवा उसमें बाधा डालता है।

उत्तरदायित्व के इस पहलू को ध्यान में रखते हुए, यह पाया जाता है कि कौटिल्य ने प्रशासनिक भूमिका प्रबंध के कानूनी, सदाचारी और नैतिक आयामों को बहुत महत्व दिया। राजा से लेकर अन्य विभागों के अध्यक्षों द्वारा अपने कर्तव्यों के अनुपालन के लिए कौटिल्य ने स्पष्ट पद्धतियों व कार्यविधियों को निर्धारित किया। उनकी राय में, कार्य अनुपालन का मूल्यांकन इस आधार पर होना चाहिए कि क्या अधिकारियों ने अपने कर्तव्य निभाते समय परिणामों को प्राप्त करने की चेष्टा करते हुए तथा सर्वोच्च स्तर पर निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति करते हुए न्यायोचित प्रक्रिया का प्रयोग किया।

कौटिल्य ने कहा कि राजा और उसके अधीनस्थ कर्मचारियों को एक नीति पर अमल करने से पहले उसकी लागत और लाभ की स्पष्ट पूर्वधारणा होनी चाहिए। राजा को राज्य के अधिकारियों पर अंतिम नियंत्रण रखना चाहिए, ताकि उनमें से प्रत्येक अपने कर्तव्यों का पालन कर्मिष्ठ, कार्यकुशल और प्रभावकारी तरीके से कर सकें। ऐसा घटित होने के लिए, वे गुप्तचरों और हितप्रहरियों की एक प्रणाली निर्धारित होनी चाहिए। उदाहरण के लिए, जो वित्तीय मामलों के प्रशासन में व्यस्त थे, उन्हें सूक्ष्म जाँच के अधीन रखने के लिए लेख और लेखा परीक्षण की एक प्रणाली स्थापित की गई थी। हम आगे देखते हैं कि प्रशासन में उत्तरदायित्व ऊपर से लेकर नीचे तक, सभी स्तरों पर प्रवर्तित (लागू) किया जाना होता था। यह राजा का कर्तव्य था कि राज्य के निर्देशों के उल्लघंन अथवा राजा द्वारा दी गई आज्ञाओं के अनुपालन के लिए प्रजा को दण्ड दिया जाए। दण्ड विविध प्रकार के थे : जुर्माना लगाया जाना, सेवा (नौकरी) से निष्कासन अथवा कोई अन्य दंडात्मक कार्यवाही, जैसा कि उस अधिकारी के अपराध की प्रकृति द्वारा आवश्यक समझा जाए।

फिर भी, राजा के लिए यह आवश्यक था कि दण्ड न्यायसंगत और उचित हो, अर्थात वह अपराध की प्रमात्रा (मात्रा) और स्वरूप के समानुपात में होना चाहिए (अनुसार होना चाहिए), न उससे अधिक, न कम। उसे (दण्ड को) न तो कठोर होना चाहिए, न कोमल (नरम) क्योंकि एक कोमल छड़ी वाले राजा का तिरस्कार किया जाता है, उस राजा का सम्मान किया जाता है जो छड़ी के द्वारा न्याय करता है। इसका तात्पर्य यह है कि राजा भी अपनी तर्कसंगति से मुक्त (आज़ाद) नहीं था और उसे अपनी मौज और सनक को कोई स्थान न देकर, अपनी सत्ता का प्रयोग विवेकपूर्ण तरीके से करना था। अपनी भूमिका निभाते हुए, राजा को धर्म के विधानों का पालन करना था। यदि सही आचरण के रक्षक के रूप में वह अपने कर्तव्यों में चूका अथवा उसके कोई भी कृत्य (कार्य) धर्म के मानकों के समरूप नहीं हो पाएँ, तो प्रजा को राजा से सवाल करने का अधिकार था।

अतः केवल एक न्यायी राजा पूरे विश्व पर विजय पर सकता था। काँटों को हटाने पर लिखी गई पुस्तक संख्या 4 ऐसे अन्य अधिकारियों की एक सूची उपलब्ध करती है, जिन्हें दुराचार, व्यापारियों के अपराधों को छिपाने, बस्तियों के बीच सडकों पर यात्रियों की सुरक्षा को सुनिश्चित करने में चूक, सरंक्षण प्राप्त गुप्तचरों को फाँसने की, घायल करने या हत्या करने की अनुमति देने जैसी प्रशासनिक त्रुटियों या भूल के लिए उत्तरदायी ठहराया जाता था। इस प्रकार, यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि प्रशासन में उच्चतर से निम्नतर स्तर के कार्मिकों में और अपने पद से जुडी परिभाषित और आवंटित भूमिकाओं का जो अनुपालन कर रहे हों, उनमें उत्तरदायित्व को प्रवर्तित (लागू) करने के लिए पर्याप्त प्रबंध था। विभाग के अध्यक्ष को केवल लापरवाह होने, अनियमित होने और गैर प्रदर्शन या निम्न प्रदर्शन के लिए ही जिम्मेदार नहीं बल्कि नियम और कानूनों के उल्लघंन के लिए भी जिम्मेदार ठहराया जाता था।

- **व्यक्ति की तुलना में संगठनात्मक हितों की अग्रता (Precedence of Organisational Interests Over Individuals)**

प्रशासन के सिद्धातों में एक सिद्धांत जो फेयोल द्वारा प्रतिपादित 14 सिद्धांतों की सूची में पाया जाता है वह ये है कि संगठन व्यक्ति से उपर है अथवा अन्य शब्दों में, संगठनात्मक हितों में साम्प्रदायिक हित भी शामिल हैं। कौटिल्य के लिए, राजा के हितों को अन्य सभी हितों से ऊपर रखना चाहिए। राज्य की सेवा में प्रवेश पाने और उसमें कायम रहने के लिए किसी के लिए भी राजा तथा साम्राज्य (राज्य) के प्रति स्वामिभक्ति (वफादारी निष्ठा) पहली और आखिरी शर्त थी। अर्थशास्त्र में राजा संगठन और राज्य का प्रतिनिधित्व करता है, व्यक्ति का नहीं। अतः इसका निष्कर्ष यह है कि प्रत्येक व्यक्ति को अपने निजी हितों को पृष्ठिका में (पीछे) रखते हुए, राज्य के हितों का समर्थक होना चाहिए।

- **अनुशासन (Discipline)**

यह राज्य समेत, किसी भी संगठन के लिए पूर्वापेक्षा है, कि सफल होने के लिए उसे लक्ष्यों की एकता के भाव के साथ कार्य करना होगा। अर्थशास्त्र अनुशासन को विशाल महत्व देता है जब वह राजा द्वारा बनाए गए और जारी किए गए निर्देशों और नियमों के सख्त अनुपालन और स्वीकृति की आवश्यकता का उल्लेख करता है। इस विषय में किसी भी कर्मचारी द्वारा कोई लापरवाही या ढ़ीलापन दण्ड को निमंत्रण देना था।

- **समन्वय (Coordination)**

समन्वय के सिद्धांत का संबंध सरकार के उपकरण के सुसंगत और समग्र संचालन की स्थापना के लिए सभी विभागों और समुहों के प्रयत्नों को संघटित करने के प्रयास से है। यद्यपि ग्रंथ से यह स्पष्ट है कि यह सिद्धांत भी संगठन और प्रशासन के कार्यो में केवल अंतर्निहित है, फिर भी इस पर बल दिया जाना इस कथन से सुस्पष्ट है कि रथ को केवल दो पहिए खींच सकते हैं, एक नहीं। अतः, यह केवल राजा का कर्तव्य नहीं है कि वह प्रमुख समन्वयकारी की भूमिका निभाए, बल्कि यह प्रत्येक विभाग या अनुभाग के अध्यक्ष के लिए अनिवार्य प्रतीत होना चाहिए कि वह अपने अधीनस्थों के कार्यों को निर्देशित और समन्वित करें।

- **निर्देशन (Direction)**

निर्देशन करना प्रबंधन और प्रशासन में एक महत्वपूर्ण गतिविधि मानी गई है। कर्मचारियों से प्रभावकारी कार्य कराने के लिए निर्देशन करने में अनेक विशेषताएँ शामिल हैं। निर्देशन एक बहु-कृत्यक अवधारणा है, जिसमें नेतृत्व, प्रेरणा, निरीक्षण और संचार से संबंधित विषय शामिल हैं। सरकार के निर्विघ्न संचालन के लिए अच्छे और प्रभावशाली नेतृत्व की प्रासंगिकता को कौटिल्य ने मान्यता दी। निर्देशन में, अन्य तत्वों के अलावा, संगठन के कार्य और कर्मचारियों की क्रियाओं में नेता की संपूर्ण तल्लीनता शामिल है।

- **नेतृत्व (Leadership)**

निर्देशन का कार्यान्वयन भी अक्सर निर्देश देने वाले नेता के गुणों पर निर्भर करता है। यह उस समय स्पष्ट हो जाता है जब हम कौटिल्य द्वारा एक अच्छे नेता पर आरोपित विशेषताओं या लक्षणों की ओर देखते हैं। ''यथा राजा, तथा प्रजा'' में कौटिल्य का विश्वास था। एक अच्छा नेता वह है जो अपनी प्रजा और साम्राज्य (राज्य) के हितों को निजी हितों से उपर रखता है। यह उस संबंध की सुस्पष्ट व्याख्या करता है, जो एक नेता और उसके अनुयायियों के बीच होना चाहिए। एक परिवर्तनकारी नेता के गुणों की ओर संकेत करते हुए, कौटिल्य कहते हैं, ''एक आदर्श राजा (शासक) वह है, जो राजर्षि जैसा व्यवहार करता है, जो प्रजा के योगक्षेम को प्रोत्साहित करने में निरंतर सक्रिय रहता है। हिन्दू आस्था के अनुसार, योगक्षेम शब्द, योग (एक लक्ष्य की सफल पूर्ति) और क्षेम (समृद्धि का शांतिपूर्ण आनन्द) के समन्वय से बना है। एक प्रभावशाली नेता अपनी प्रजा और अपने लिए भौतिक लाभ, आध्यात्मिक कल्याण और सुख उपलब्ध कराता है (जैन तथा मुखर्जी, - Jain and Mukherjee, 2009)।

- **निरीक्षण / सर्वेक्षण और नियंत्रण (Supervision and Control)**

यह सिद्धांत अनेक शास्त्रीय चिन्तकों द्वारा विकसित प्रशासन के सिद्धांत का हिस्सा रहा है। कौटिल्य एक संगठन में सर्वेक्षण और नियंत्रण के महत्व से अनभिज्ञ नहीं थे।

- **मूल्य आधारित प्रशासन (Value-based Administration)**

कौटिल्य ने मूल्य आधारित प्रबंधन और प्रशासन की अवधारणा को प्रस्तुत किया, जब उन्होंने एक नेता (प्रशासक) में अनेक गुणों की पहचान की और यह टिप्पणी की कि

संगठन के मौलिक लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए एक नेता को सद्गुणयुक्त, सच्चा और दुर्गणों से मुक्त होना चाहिए। उसे बुजुर्गों की सलाह के माध्यम से विश्वसनीयता, आभार, उदारत्व, तत्परता और दीर्घकालीन दृष्टि का आह्वान करना चाहिए।

बोध प्रश्न 1

नोट : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से अपना उत्तर मिलाइए।

1) अर्थशास्त्र में अंतर्निहित लोक प्रशासन के कुछ मुख्य सिद्धांतों का विस्तार कीजिए।

.....

.....

.....

1.4 प्रशासनिक व्यवस्था का संगठन और संरचना

कौटिल्य द्वारा रचित ग्रंथ में प्रशासन और शासन के इस पहलू पर सर्वाधिक ध्यान दिया गया है। शासन के उद्देश्य से, कौटिल्य का राज्य, सरकार की एक केन्द्रीकृत प्रणाली थी, परन्तु प्रशासन के उद्देश्य के लिए, इसे एक विकेंद्रित प्रणाली कहा जा सकता है। अतः अर्थशास्त्र में ये पाया जाता है कि सरकार तीन स्तरों पर संगठित थीः केन्द्र, प्रदेश और स्थानीय।

- **राजा की संस्था (Institution of the King)**

जैसा की इस इकाई की प्रस्तावना में देखा जा चुका है, केन्द्र सत्ता का अधिकेन्द्र था और सरकार का गठन एक पिरामिड के आकार (रूप) में किया गया था, जिसकी चोटी या शिखर पर राजा था। राज्य की सारी शक्तियाँ-विधानपालिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका-राजा में निहित थीं। कोई प्रचलित एकत्ववादी राजतंत्रीय प्रणाली के संचालन को देख सकता है। राजा कानून का स्त्रोत था; वह निर्णयों के अक्षरशः कार्यान्वयन के लिए ज़िम्मेदार था और वह न्याय का अंतिम स्त्रोत था।

परन्तु उसकी सत्ता बेलगाम या निरंकुश नहीं थी। उसकी भूमिका और उस भूमिका की अदायगी के तरीके स्पष्ट रूप से परिभाषित थे, साथ ही उसके दण्ड का प्रावधान भी था, जिसे राजा को उस स्थिति में भोगना था यदि अपनी सत्ता के प्रयोग में उसे न्यायपूर्ण और निष्पक्ष न पाया गया हो। उसे छड़ी/दण्ड का प्रयोग अपनी जनता की और अपनी आध्यात्मिक भलाई, भौतिक खुशहाली और सुख के लिए करना चाहिए। यदि वह अपने कर्तव्यों को निर्देशानुसार निभाने में असफल होना है। तो वह निश्चित रूप से जन-आक्रोश को और यहाँ तक की विद्रोह का भी सामना कर सकता है।

अपने अधिकारियों द्वारा समय पर और प्रतिक्रियात्मक अनुपालन के लिए उनसे संबंधित कानूनों, नीतियों या निर्देश और फ़रमानों (राजाज्ञाओं) में संचार और तत्व की स्पष्टता अनिवार्य थी। निर्णय अथवा उसके संचार की भाषा के संबंध में कोई अस्पष्टता नहीं होनी थी। एक राजा के लिए, प्रभावशाली और सफल होने के लिए लोभ, दंभ, क्रोध, कामुकता, घमंड और दुःसाहस से मुक्त होना अनिवार्य था और उसे सभी प्रकार के इन्द्रिय सुखों के अतिसेवन से बचना था (रंगराजन-Rangrajan, 1992 : 144)। आत्म-अनुशासित होने के अलावा, एक चतुर राजा को विद्या की सभी शाखाओं में निरंतर ज्ञान ढूँढना चाहिए और

अपव्यय, मनमौजीपन, दिवास्वप्न असत्य से बचना चाहिए और मिला जुलाकर, अच्छे आचरण की सीमाओं को नहीं लाँघना चाहिए।

जहाँ तक राजा के कार्यों और कर्तव्यों का प्रश्न है, उसके पास एक समय सारणी थी जिसके अन्तर्गत सूचीगत कर्तव्यों का निर्वाह किया जाना था। डेढ़ घंटे की निश्चित समय सीमा के अन्तर्गत, दिन में और रात को, राजा द्वारा नित्यक्रम में प्रशासनिक कर्तव्यों का निर्वाह किया जाना था जैसे रक्षा, राजस्व और व्यय पर सूचना (रिपोर्ट) प्राप्त करना, प्रजा की अर्जियों को सुनना, राजस्व प्राप्त करना, पत्र लिखना और भेजना, गुप्तचरों से गुप्त सूचना प्राप्त करना, निजी मनोंरजन और चिन्तन में समय बिताना तथा सलाहकारों से परामर्श करना आदि।

उसके (राजा के) निजी प्रयोग का समय भी सारणी का हिस्सा था। परन्तु उसका सर्वोपरि क्रियात्मक कर्तव्य था अर्थव्यवस्था के प्रबंधन में सदा सक्रिय रहते हुए अनवरत समृद्धि की प्रत्याभूति (गारंटी) और भावी आर्थिक विकास के लिए उत्पादक आर्थिक प्रयास को अपनाते हुए अपनी प्रजा के लिए कार्य करना और उसके कल्याण को सुनिश्चित करना था। (*Ibid.*)

यही वह कार्य है जो राज्य को खुश रख सकता है। कौटिल्य ने लिखा है प्रजा की खुशी राजा की खुशी है; प्रजा के कल्याण में राजा का कल्याण है। राजा को स्वयं को जो अच्छा लगे उस पर विचार नहीं करना चाहिए बल्कि प्रजा हित में जो कार्य हो उस पर ध्यान देना चाहिए। पालिका (राजा) के अलावा राज्य के उच्चतर पदों पर आसीन अनेक अधिकारियों का उल्लेख मिलता है जैसे पुरोहित और मुख्य पुजारी, महामात्य, सेनापति और अमात्य और अध्यक्ष। अर्थशास्त्र में यह स्पष्ट नहीं है कि क्या ये अधिकारी एक पदानुक्रम निर्देशित प्रणाली में बंधे हुए थे या यह राजा के सभी समस्तरीय संबंध पर आधारित एक सपाट संगठन था। एक चीज़ जो स्पष्ट रूप से स्थापित है, वह है कि उच्च पदों पर सभी अधिकारी व्यक्तिगत और सामूहिक क्षमता में राजा के प्रति उत्तरदायी थे। वे राजा के प्रत्यक्ष नियंत्रण में थे।

- **संगठन/विभाग के आधार (Bases of Organisation/Department)**

प्रशासनिक प्रणाली का एक महत्वपूर्ण पहलू, जो लोक प्रशासन के एक विद्यार्थी के लिए ध्यान देने योग्य है, वह ये है कि मौर्य काल में कार्य के संगठन के आधार, आधुनिक युग के संगठन के कुछ सिद्धांतों से मेल खाते हैं। अर्थशास्त्र के विभिन्न अध्यायों से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि विभागों का संगठन प्रजा, लक्ष्य और प्रक्रिया के अनुसार था। वैश्याओं का विभाग, रक्षा विभाग, राजस्व और कृषि और हाथी, घोडों, कारागार (जेल), आभूषण और टकसाल कुछ विभाग हैं, जिनका उल्लेख इन आधारों के संकेतक के रूप में किया जा सकता है। कौटिल्य अपनी द्वितीय पुस्तक में विभागों का विस्तृत वर्णन करते हैं, जो अन्य सभी पुस्तकों में सबसे लम्बी है। इस पुस्तक मं 34 अध्यक्षों, का उल्लेख है जो एक विभाग अथवा एक विभाग के अन्तर्गत एक इकाई की अध्यक्षता करता है। ये अध्यक्ष थे : नागवनायध्यक्ष, कोषाध्यक्ष, आकारध्यक्ष, लोहाध्यक्ष, लक्षणाध्यक्ष, खानाध्यक्ष। इनके अलावा नमक, धातु और आभूषण, मालगोदाम, राज्य व्यापार, वन उत्पाद, आयुध विभाग, भार तथा परिमाण, सर्वेक्षक और समयपाल, सीमा शुल्क और चुंगी, राजभूमि, मदिरा, पशुसुरक्षा और पशुवध, मनोंरंजन, जहाजरानी, बंदरगाह तथा पतन (पोताश्रय), राज-यूथ (गोवृंद), घुडसवार फौज, हाथी निकाय, रथ निकाय, पैदल सेना, पारपत्र (पासपोर्ट), चारागाह, दयुतक्रीड़ा (जूआ), निजी व्यापारी, जेल और मंदिर के भी अध्यक्ष थे।

यदि इस कार्य विभाजन का और सूक्ष्म परीक्षण किया जाए तो ऐसा प्रतीत होगा कि कुछ विभाग वास्तव में एक विभाग के ही भाग या प्रभाग/खंड थे। उदाहरण के लिए, कपड़ा, खनन और धातुकर्म, खान और धातु, टकसाल और नमक, सिक्के, बहुमूल्य धातु और

आभूषण आदि के अध्यक्षों को आसानी से उद्योग विभाग का हिस्सा माना जा सकता है। इसी प्रकार, राज्य व्यापार, निजी व्यापार, भार तथा परिमाण, सीमा शुल्क और चुंगी, और प्रधान सर्वेक्षक और समयापाल से संबंधित गतिविधियों को व्यापार विभाग के अधीन रखा जा सकता है, जबकि जहाजरानी, बंदरगाह और पतन (पोताश्रय) और तारण को जहाजरानी विभाग के अंगो (घटकों) के रूप में देखा जा सकता है अथवा कृषि विभाग को राजभूमि, उत्पादक वन, राजयूथ या राज पशुवृंद, पशुपालक और पशुवध नियंत्रक के खंडो के समुच्च्यय के रूप में देखा जा सकता है। इस वर्णन से एक अन्य अर्थ यह निकाला जा सकता है कि विभागों का संगठन लगभव पदानुक्रमित व्यवस्था में किया गया था। यहाँ एक अन्य उल्लेखनीय पहलू यह है कि द्वितीय पुस्तक (Book 2) केवल कार्यकारी अध्यक्षों के कर्तव्यों का सूक्ष्म वर्णन ही नहीं करती, बल्कि प्रत्येक पदाधिकारी की योग्यताओं को निर्देशित करती है। इसके अतिरिक्त विभागों के अध्यक्षों द्वारा नियमों और कानूनों के उल्लंधन या अपालन पर (पालन न किए जाने पर) दिए जाने वाले दंडों का भी विस्तृत वर्णन मिलता है।

कोष और राजस्व प्रशासन के विभाग का कौटिल्य द्वारा विशेष निरूपण किया गया, क्योंकि उनका यह दृढ़ विश्वास था कि राज्य और राजा (शासक) की शक्ति या बल कोष में है। कोष का अध्यक्ष महा-कोषपाल था जिसे सम्निधातृ के नाम से जाना जाता था। उसकी सहायता कोष का मुख्य अधीक्षक और मालगोदामों का मुख्य अधीक्षक करते थे। इन अधिकारियों की योग्यताएँ और कर्तव्यों का द्वितीयक पुस्तक (Book 2) के विभिन्न अध्यायों में स्पष्ट उल्लेख मिलता है।

कार्य के कार्यात्मक विभाजन से यह अभिप्राय है कि इन विभागों के अध्यक्षों का चयन, जिस विषय से उन्हें संबंध रखना था (निपटना था), उसमें उनके विशेष ज्ञान के आधार पर किया जाता था। परन्तु, एक विद्यार्थी अस्पष्टता की स्थिति का सामना करता है, जब वह देखता है कि कौटिल्य एक अधिकारी का एक ही पद अथवा स्थान पर स्थायी रूप से बने रहने के पक्ष में नहीं थे। इसका तात्पर्य ये है कि अधिकारियों को अपने पद और भूमिकाओं को बदलते रहना चाहिए। यदि ऐसा था तो प्रबंधन के क्षेत्र में विशेष ज्ञान का सिद्धांत अनावश्यक या फालतू हो जाता है और हम आसानी से इस नतीजे पर पहुँच सकते हैं कि संगठन सामान्यतः प्रशासन के सिद्धांत पर कार्यरत था। यह भी संभव है कि विभाग को आलस्य, नियमितता, भ्रष्टाचार, अकुशलता और उदासीनता की गिरफ्त से बचाने के लिए ऐसा किया गया हो।

अन्य अधिकारी (Other Officials): ऊपर उल्लिखित विभागों और अधिकारियों के अलावा अर्थशास्त्र अनेक अन्य अधिकारियों का भी ज़िक्र करता है, जिनके पास विशेष कार्य की जिम्मेदारी है। उदाहरण के लिए, मंदिर और पवित्र स्थलों का प्रबंधन, मंदिरों और पवित्र स्थलों के मुख्य अधीक्षक की देख-रेख में होगा। बन्धनागाराध्यक्ष या जेल के अधीक्षक को हवालातों और कारागारों (जेल) से संबंधित अधिपाल या जमा (राशी) का रक्षक लावारिस प्रतिज्ञाओं और जमा (राशी) की देखभाल का प्रभारी था।

- **स्थानीय स्तर पर प्रशासन (Administration at the Local Level)**

प्रशासनिक सुविधा के उद्देश्य से, स्थानीय स्तर पर भी प्रशासनिक इकाइयाँ स्थापित की गई थीं। नगरपालिका प्रशासन की अध्यक्षता मुख्य प्रशासक द्वारा की जाती थी, जिसे नागरिक के नाम से जाना जाता था और उसकी सहायता के लिए अनेक गोप थे जो प्रत्येक वॉर्ड या मुहल्ले के प्रशासक थे जिनमें नगर बंटा हुआ था। नागरिक का कार्य प्रजा और सम्पति की सुरक्षा और सलामती को सुनिश्चित करना, मनोंरजन और वैश्यावृति के स्थलों को, निजी व्यक्तियों और धर्मार्थ संस्थाओं द्वारा संचालित डेरों या आवासों को

नियमित करना, प्रजा के आवागमन को-विशेष रूप से अजनबियों के आवागमन को, भार और परिमाण से जुड़े विषयों को, नागरिक सेवाओं की उपलब्धि और आधारभूत संरचना के निर्माण, सड़कों और यातायात को नियमित करना, नगर व्यापार और कारोबार को नियमित करना और हर उस चीज़ का परिपालन या कार्यान्वयन करना, जो ऊपर से आदेश या निर्देश के रूप में आया हो।

ग्रामीण प्रशासन का विभाजन स्थानीय (*Sthaniya*) में किया गया था, जो आधुनिक युग के जिले के समान हैं, जिसकी अध्यक्षता स्थानिक नामक अधिकारी द्वारा की जाती थी। वह कानून और व्यवस्था को कायम रखने के लिए जिम्मेदार था। इसके अलावा स्थानीय स्तर के कोष तथा राजस्व की वसूली पर भी उसका सूक्ष्म पर्यवेक्षण था। चारागाह या गोचर भूमि का प्रबंधन और सुरक्षा चारागाह के मुख्य नियंत्रक की जिम्मेदारी थी। 5-10 ग्रामों के एक समूह के प्रशासन के सहज संचालन के लिए अनेक गोप थे। ग्रामकुटम, ग्रामस्वामी, ग्रामिक और ग्रामभृतक के नाम से ग्रामीण स्तर पर चार अन्य सेवकों का भी उल्लेख किया गया है।

एक अन्य संस्था जिसने ग्रामीण क्षेत्रों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, वह थी ग्रामवृद्ध (गांव के बुजुर्ग), जिन्हें मंदिर संपत्ति और नाबालिग की संपत्ति का न्यासी (ट्रस्टी) माना जाता था। वे ग्रामों के बीच सीमा-विवादों के निपटारे में मदद करते थे, खेतों से संबंधित विवादों में न्यायाधीश के रूप में कार्य करते थे। इसके अलावा, वे सम्पत्ति के क्रय और विक्रय में गवाह का कार्य करते थे। ग्रामिक ग्राम का प्रधान होता था, जिसके कार्यों में राज्य की सीमाओं का निर्माण करना, मवेशी या पशु चराई को नियमित करने के लिए उचित प्रबंध करना, साझी भूमि पर चराई पर लगाए गए शुल्क, निर्धारित जुर्मानों (अर्थदंड) और राज्य द्वारा प्रदिष्ट जुर्मानों की ग्राम के लिए राजस्व के रूप में वसूली करना शामिल था।

बोध प्रश्न 2

नोट : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।
ख) इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से अपना उत्तर मिलाइए।

1) अर्थशास्त्र में वर्णित, केन्द्र में प्रशासनिक उपकरण (या व्यवस्था) के संगठन और संरचना का विवेचन कीजिए।

.....

.....

.....

1.5 कार्मिक प्रशासन

'एक अच्छे प्रशासन की विशेषता उसे चलाने वालों की गुणवत्ता द्वारा चिन्हित होती है।' यह पुरानी कहावत है। अर्थशास्त्र द्वारा चित्रित प्राचीन प्रशासन इससे अलग नहीं था। जहाँ तक अथशास्त्र में जन सेवकों (या लोक सेवकों) के विवरण का संबंध है। कौटिल्य इस तथ्य या बात पर बल देते हैं कि राज्य अपने सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक उद्देश्यों की प्राप्ति उन लोगों के माध्यम से करता है, जो निर्णयों, नीतियों और परियोजनाओं के प्रशासन के कार्य में लगे होते हैं। कार्मिक प्रशासन भी महत्वपूर्ण था क्योंकि राज्य की गतिविधियों का विषय-क्षेत्र विस्तृत और विविध था, जिसने क्रमश : लोक प्रशासन के विस्तृत और विविध विषय-क्षेत्र का संकेत दिया या उपलक्षित किया। राज्य सार्वजनिक रोजगार का मुख्य स्त्रोत था। इसके अलावा, राज्य मूल रूप से एक

कल्याणकारी राज्य था, जिसमें छोटी मछलियों को जीने का उतना ही अधिकार था। जितना बड़ी मछलियों को और जिसमें राजा को प्रजा के साथ अपनी संतान जैसा व्यवहार करना था। अनाथों, निराश्रयों, असहायों और वृद्धों की देखभाल करना राज्य उपकरण या व्यवस्था की जिम्मेदारी थी। राज्य की नीति को समाज की सुरक्षा, कानून और व्यवस्था को कायम रखना, प्रदेशों की सुरक्षा और सलामती तथा नागरिकों की खुशहाली के प्रोत्साहन के प्रति राज्य के कर्तव्य को ध्यान में रखना था। परन्तु यह भी सच है कि कौटिल्य अपने आधुनिक अर्थ में कार्मिक प्रशासन शब्द के प्रत्येक पहलू का अध्ययन नहीं करते। पुस्तक संख्या 5 के पठन से यह स्पष्ट होता है कि वे कर्मचारियों के चयन के तरीकों और साथ ही साथ उनकी क्षमताओं को सुधारने के महत्व के प्रति सचेत थे।

एक सार्वजनिक रोजगार इच्छुक व्यक्ति में पहचानने लायक दो मूल विशेषताएँ थीं, राजा और राज्य (साम्राज्य) के प्रति वफादारी और प्रतिबद्धता, जो अन्य किसी योग्यता से कहीं अधिक महत्वपूर्ण थीं। दूसरे शब्दों में, कौटिल्य ने राज्य द्वारा भर्ती किए जाने वाले आवेदक में तीन प्रकार की योग्यताओं पर ध्यान केन्द्रित किया, अर्थात्, सदाचारी/नीतिपरक, तकनीकी या व्यावसायिक और शासक तथा देश के प्रति वफादारी। उसे काम, क्रोध और लोभ से मुक्त होना चाहिए। लालच और प्रलोभन से मुक्ति एक पूर्वशर्त है क्योंकि केवल ऐसा ही अधिकारी प्रजा और शासक, दोनों के हितों की सेवा अत्यन्त प्रभावशाली और संतोषजनक तरीके से कर पाएगा। राज्य और प्रजा की सलामती और सुरक्षा का संबंध राज्य के कर्मचारियों के उच्च सदाचारी और नैतिक चरित्र से है। इसके घटित होने के लिए, कौटिल्य काम, क्रोध, मद और लोभ के मापन की अनेक परीक्षाएँ निर्धारित करते हैं। इनमें से कुछ परीक्षाओं को हालाँकि अव्यवहार्य कहा गया। यहाँ एक अन्य उल्लेखनीय विषय यह है कि कौटिल्य का ध्यान केवल उच्चतर पदों के अधिकारियों की ओर आकर्षित हुआ। ऐसा प्रतीत होता है कि निम्नतर स्तर के कर्मचारियों पर उनकी नज़र नहीं पड़ी अथवा उन्होंने यह सोचा होगा कि प्रशासन में सब कुछ चोटी पर (उपर) बैठे व्यक्तियों की गुणवत्ता और अनुचर, अर्थात अधीनस्थ कर्मचारी सामान्य रूप से अधिपति (बॉस) या अध्यक्ष के आचरण का अनुकरण करते थे (नकल करते थे)। कुछ हद तक आधुनिक समय में भी यही स्थिति जान पडती है, क्योंकि एक संगठन का प्रदर्शन अक्सर महत्वपूर्ण तरीके से संगठनात्मक नेतृत्व के प्रकार से संबंधित होता है। कार्मिक प्रशासन के तत्वों में से, निम्नलिखित का विस्तृत वर्णन मिलता है :

भर्ती, पदोन्नति तथा स्थानांतरण (Recruitment, Promotion and Transfer)

भर्ती एक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा निर्धारित या पारिभाषित प्रशासनिक कार्यो के अनुपालन के लिए सर्वश्रेष्ठ की खोज और चयन होता है या अयोग्य जिन्हें कभी-कभी अनादरपूर्ण तरीके से ''धूर्त (या दुर्जन)'' के नाम से उल्लिखित किया जाता है, की छँटाई की जाती है। निःसंदेह आज जैसा पाया जाता है, उस प्रकार की न तो मुक्त (खुली) भर्ती प्रणाली थी और न ही एक स्वतंत्र भर्ती अभिकरण (एजेंसी), इसके बावजूद उच्चतर पदों के अधिकारियों के चयन के लिए राजा स्वयं जिम्मेदार था। भर्ती के स्त्रोत का स्पष्टता से न तो उल्लेख मिलता है और न ही उसकी पहचान की गई है। इसका आशय यह हो सकता है कि यह भर्ती का एक प्रकार का बन्द मॉडल था। दूसरा, विभिन्न कार्यात्मक जिम्मेदारीयों के लिए आवश्यक योग्यताओं की सामान्य रूप से परिभाषा दी गई थी, जिसके आधार पर एक व्यक्ति प्रवेश पा सकता था या उसे अस्वीकृत किया जाता सकता था अथवा कार्य का निम्न दर्जा दिया जा सकता था। राजा बनने के लिए, राजा को भी योग्यता की अनेक शर्तों को पूरा करना होता था। यही स्थिति राजकुमार या पुरोहित या पूर्व चर्चित अन्य विभागों के अध्यक्षों की भी थी।

किसी भी पद या कार्यालय में नियुक्त होने से पहले लोक सेवकों को अनेक परीक्षाओं का सामना करना पडता था। उदाहरण के लिए, एक प्रसंग आता है, धर्मोपधा (धर्म-उपधा) अर्थोपधा (अर्थ-उपधा), भयोपध (भय-उपधा) और कामोपधा (काम-उपधा) जैसे परीक्षाओं का, जिनके द्वारा, प्रत्याशियों या निवेदकों के गुणों का लोभ, भय से मुक्ति और इसके अतिरिक्त आचार, नैतिकता, सत्यनिष्ठा और प्रतिबद्धता के संबंध में पवित्रता की जाँच की जाती थी। जो धर्मोपधा परीक्षा में उत्तीर्ण होते थे, उन्हें धर्मस्थीय और कंटकशोधक नियुक्त किया जाता था, जबकि वे प्रत्याशी जो प्रलोभन से मुक्ति की परीक्षा में उत्तीर्ण होते थे, उन्हे राजस्व और मालगोदाम के विभाग के अध्यक्षों के रूप में नियुक्त किया जाना चाहिए था। प्रमाणित चरित्रवान व्यक्तियों को महिलाओं के विभाग और राजा के अंतःपुर का प्रभारी बनाया जाता। प्रधानमंत्री का पद उन्हें मिलना चाहिए जो चरित्र की सभी परीक्षाओं में सफल रहे हों और समस्त प्रलोभनों से मुक्त हों। इतना ही नही, ऐसा प्रतीत होता है कि कौटिल्य ने न केवल विषय के ज्ञान या तकनीकी योग्यताओं के महत्व को मान्यता दी, बल्कि साथ ही व्यावहारिक अनुभव को भी महत्व दिया। यह वर्तमान समय में राज्य के अधीन अनेक पदों के लिए योग्यताओं की शर्तों को निर्धारित करने की पद्धति के अधिक निकट आता है (शामाशास्त्री-Shamasastry, 1967)।

अमात्यों के चयन के लिए पात्रताओं के सूची में निम्नलिखित योग्यताएँ शामिल थीं :

- वह देश का नागरिक होना चाहिए।
- वह एक कुलीन परिवार से होना चाहिए और प्रभावशाली होना चाहिए।
- वह कलाओं में अच्छी तरह से प्रशिक्षित होना चाहिए।
- उसमें दूरदर्शिता, निर्भीकता, विवेक, बुद्धि, उत्साह और उर्जा (उजस्विता), प्रबल स्मरणशक्ति, चरित्र और वीरता के गुण होने चाहिए।
- वह कुशल, बाक्पटु, निष्ठापूर्ण श्रद्धा से युक्त, उत्तम व्यवहार से संपन्न होना चाहिए।
- वह अस्थिर चित्त, विलंबन (टाल-मटोल) और ऐसे गुणों से मुक्त होना चाहिए जो द्वेष (घृणा) और शत्रुता को उत्तजित (भडकाना) करता है (*Ibid.*)।

अधिकारियों की पदोन्नति और स्थानांतरण पूर्ण रूप से राजा के विवेकाधीन थे। प्रेक्षण प्रणाली और प्रतिपुष्टि (फीडबैक) को अपनाते हुए, अनुपालन मूल्यांकन के आधार पर उसे निर्णय लेना था। लोक सेवकों के स्थानांतरणों के बारे में विस्तृत परिचर्चा नहीं मिलती सिवाय इसके जब वे कहते हैं कि विभागों के अध्यक्षों को एक ही नौकरी में स्थायी रूप से ठहरना नहीं चाहिए और उनका बारंबार, क्रमावर्तन होना चाहिए। कुछ कर्मचारियों का स्थानंतरण ही नहीं होता था – शाही इमारतों, किलों (दुर्गों) और देहाती क्षेत्रों के रक्षकों का, जबकि अन्य कर्मचारियों का स्थानांतरण केवल एक सावधानी के रूप में या भ्रष्टाचार के विरूद्ध एक उपाय के रूप में किया जा सकता था।

तनख़्वाह और वेतन (Pay and Salaries)

जब वेतन और तनखाह का प्रश्न उठता है तो ये पाया जाता है कि अधिकारियों को वेतन/तनखाह के रूप ने निश्चत राशि मिलती थी, जिसे राजा की स्वेच्छा से बढ़ाया या घटाया जा सकता था जो कि अधिकारी द्वारा राज्य के वांछित लक्ष्यों की प्राप्ति अथवा उसमें असफलता पर निर्भर था। इसके अतिरिक्त कोई वेतन-मान या आश्वासित वेतन-वृद्धि नहीं होती थी जैसा कि आजकल होता है। अर्थशास्त्र में परिचर्चा यह दर्शाती है कि वेतन क्रम में 48000 पण से लेकर न्यूनतम 60 पण तक का अंतर हो सकता था। महामात्य

(प्रधानमंत्री), पुरोहित, सेनापति, युवराज, आचार्य, ऋत्विक, रानी और राजमाता 48000 पण के वेतन के अधिकारी थे, जबकि दौवारिक, अनतर्वंशिक, प्रशास्तृ, सामाहर्तृ और सम्निधाता 24000 पण की श्रेणी में थे। ये वेतन-क्रम 12वीं संख्या तक बढ़ता था, जिसमें निजी सहायक और सांगीतिक कर्मचारी आदि निम्नतम थे, जिन्हें 60 पण का वेतन दिया जाता था। यह सामने आता है कि वेतन पद पदवी, अनुभव और योग्यता या ज्ञान के अनुरूप होते थे। लोक सेवकों के कुल वेतन का निर्धारण इन सिद्धांतों के आधार पर किया जाता था :

1) देहात और नगर की भुगतान करने की क्षमता।

2) यह राज्य के राजस्व के एक-चौथाई भाग से अधिक नहीं होगा।

3) वेतन, कर्मचारियों की शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पर्याप्त होना चाहिए और धर्म तथा अर्थ के सिद्धांतों से असंगत नहीं होना चाहिए।

4) वेतन का निर्धारण इस प्रकार होना चाहिए कि उचित योग्यता वाले उचित लोग (व्यक्ति) आकर्षित हों ताकि राज्य के लक्ष्यों की प्राप्ति हो सके।

5) वेतन का भुगतान नगद या वस्तु के रूप में अथवा दोनों के रूप में किया जाता था, जो कोष में उपलब्ध नकद की पर्याप्तता पर निर्भर था। (रंगराजन, *op.cit.*)।

इसी प्रकार, निवृति-वेतन (पेंशन) या सेवा-निवृति लाभ की प्रणाली के बारे में एक स्पष्ट विवरण नहीं मिलता जिसका कि आज का एक कर्मचारी अधिकारी है। इसके बावजूद, राज्य की सेवा के दौरान, राजकर्मियों के मरण पर, उनके आश्रित, राज्य की ओर से अनुरक्षण (देख-रेख) के अधिकारी थे। अंत्येष्टि, जन्म या बीमारी जैसे अवसरों पर दिवंगत सरकारी कर्मी के परिवार को मुद्रा और श्रद्धा की भेंट दी जाती थी। इसका आशय यह था कि यद्यपि उस समय वृद्धावस्था निवृति वेतन (पेंशन) की कोई सुस्पष्ट परियोजना या स्कीम नहीं थी, कर्तव्य पालन के दौरान लोक सेवक की मृत्यु के बाद, उस कर्मचारी के परिवार की जिम्मेदारी राज्य की थी। दूसरा आशय यह था कि राज्य के अधीन सेवा आजीवन की थी (एक जीवनकाल की थी)।

लोक सेवकों का प्रशिक्षण (Training of Civil Servants)

सरकार के सर्वोच्च स्तर के अधिकारियों के प्रशिक्षण ने कौटिल्य के मन (या बुद्धि) को सर्वाधिक आकर्षित किया क्योंकि यही विषय था जिसका अर्थशास्त्र के रचयिता द्वारा सुस्पष्ट और विशिष्ट विवेचन किया गया था। (Book 1) के, ''प्रशिक्षण'' शीर्षक, जिसके अन्तर्गत 500 सूत्र, 12 अध्याय और 18 भाग हैं, के माध्यम से सही ढंग से खोजा एवं समझा जा सकता है। अधिकारियों के प्रशिक्षण से जुडे अनेक पहलुओं की वे चर्चा करते हैं, जैसे उचित रूझान वाले (योग्यता), उचित व्यक्तियों का चयन और उन्हें हस्तांतरित या प्रेषित की जाने वाली विषय-वस्तु।

एक तरह से उन्होंने केवल प्रशिक्षणीय (जो प्रशिक्षण के योग्य हो) के प्रशिक्षण पर बल दिया, अर्थात, प्रशिक्षण सब के लिए खुला नहीं होना चाहिए, केवल उनके लिए होना चाहिए, जो अपने विचार और व्यवहार्य सामर्थ्यों और क्षमताओं को उन्नत करने और सुधारने के इच्छुक हों। अतः अर्थशास्त्र का दावा है कि प्रशिक्षण के लिए केवल ऐसे प्रत्याशियों को चुना जाना चाहिए, जो सीखने की इच्छा रखते हों और एक अच्छे श्रोता के गुणों से संपन्न हों। इसके अतिरिक्त उनमें धारणक्षमता (स्मरण), चिंतन (विमर्श), समझदारी (विवेक), गलत अथवा असत्य की अस्वीकृति और किसी अन्य व्यक्ति के प्रति ने होकर, सत्य के प्रति दृढसंकल्पता के गुण भी होने चाहिए। उनके पहले के ज्ञान और

सुविज्ञता के वर्धन के रूप में सीखने की इच्छा पर एकाग्रता ने उनकी जिज्ञासा और अभिप्रेरणा (प्रेरणा) के गुण को रेखांकित किया।

यहाँ यह उल्लेख करना प्रासंगिक होगा कि कौटिल्य केवल सैद्धांतिक तौर पर प्रशिक्षण के पक्ष में नहीं थे, उनकी रूचि व्यावहारिक प्रशिक्षण प्रदान करने में भी थी। ऐसा प्रतीत होता है कि कौटिल्य ने लोक सेवकों में अनुशासन को मनोगत करने की दृष्टि से सप्रयोजन (उद्देश्य सहित) प्रशिक्षण पर बल दिया अर्थात् उन्होंने प्रशिक्षण को एक संगठन में अनुशासन को प्रोत्साहित करने का एक उपयुक्त साधन माना। आधुनिक प्रबंधन के युग में भी इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता है कि प्रशिक्षण वांछित परिणाम उत्पन्न कर सकता है यदि चुने गए लोगों के मनोवैज्ञानिक, व्यावसायिक और सांस्कृतिक व्यक्तित्व में परिवर्तन लाने की दृष्टि से प्रशिक्षण के लिए प्रत्याशियों का चयन सावधानी से किया जाए। संगठनात्मक कुशलता और संस्कृति तभी प्रभावित हो सकती है और उत्पादकता भी सुधर सकती है। प्रजा/जनता की खुशहाली में परिवर्तन लाने के लिए प्रशासनिक विकास के वर्तमान संदर्भ में कौटिल्य के प्रशिक्षण के सिद्धांत प्रासंगिक हैं। आश्चर्यजनक बात ये है कि अर्थशास्त्र में निम्नस्तरीय कर्मचारियों की प्रशिक्षण आवश्यकताओं की ओर अधिक ध्यान नहीं दिया गया। उसका मुख्य संबंध राजकुमार, राजा और अन्य उच्च अधिकारियों से था।

बोध प्रश्न 3

नोट :क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।
ख) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) राज्य के अधीन लोक सेवकों की भर्ती के बारे में कौटिल्य के विचारों का विवेचन कीजिए।

.....

.....

.....

2) लोक सेवकों के प्रशिक्षण पर कौटिल्य के विचारों की व्याख्या कीजिए।

.....

.....

.....

1.6 वित्तीय प्रशासन

कौटिल्य ने राज्य के वित्तीय स्वास्थ्य पर उच्च महत्व दिया। उनका दृढ़ विचार था कि राज्य की शक्ति उसके कोष के बल पर निर्भर थी। यही कारण है कि वे करों की वसूली और राज्य के संसाधनों में वृद्धि के विषयों के साथ-साथ कोष के प्रबंधन और प्रशासन की ओर विशेष ध्यान देने हैं। वित्त से जुड़े जिन अन्य क्षेत्रों ने कौटिल्य का ध्यान आकर्षित किया, वे थे बजट, कृषि कर, लेखा परीक्षा और लेखा। मौर्यकाल में कोष को प्रशासनिक प्रणाली का अत्यावश्यक हिस्सा (मर्मस्थान) माना जाता था।

कोष के प्रति राजा को अपना सर्वोत्तम ध्यान समर्पित करता था, क्योंकि राज्य की समस्त गतिविधियाँ उस पर निर्भर थीं। यह कहना एक सामान्य सत्य है कि बिना संपति या धन

के, प्रशासन को चलाना बेशक असंभव नहीं तो कठिन अवश्य होता है। अतः ऐसा कहा गया है, कि एक राजा, जिसका कोष रिक्त या जर्जर हो, वह नागरिकों व देश की जीवनशक्ति का क्षरण (नष्ट) करता है। संबंधित अधिकारियों का कर्तव्य था कि वे संसाधनों का निर्माण सशक्तीकरण और वृद्धि करें, परन्तु ऐसा किसी भी निरंकुश/स्वेच्छाचारी, अनुचित और अन्यायपूर्ण तरीके से नही किया जाना था। उन्हें केवल ऐसे ही करों को लागू और रसूल करना चाहिए जो उचित और तर्कसंगत हों।

कौटिल्य की परियोजना (Scheme) करदाताओं और कर के भुगतान से मुक्त लोगों की सूची प्रस्तुत करती है। इस प्रकार ग्रामों का भी विभाजन करदाता और गैर-करदाता में किया गया। आज भी ऐसे व्यक्ति और संस्थाएँ हैं जो कर-मुक्त है। अमात्यों में से एक की नियुक्ति कोषाध्यक्ष के रूप में की जाती थी जिसे सम्निधात के नाम से जाना जाता था। इसके अलावा, दो अन्य अधिकारी सभी भण्डारों के प्रभारी थे, एक का नाम कोष का प्रमुख अधीक्षक और दूसरे का गोदामों का प्रमुख अधीक्षक था। राजा को कोष पर प्रत्यक्ष नियंत्रण रखना था और कोषाध्यक्ष उसके प्रति उत्तरदायी था। कौटिल्य ने उन तरीकों के बारे में चेतावनी दी जो कोष को हानि पहुँचा सकते थे जैसे अधीक्षकों द्वारा दुरूप्योग या गबन, करों की माफी, बिखरी वसूली, झूठा हिसाब और कोष तक पहुँचाने से पहले वसूल किए गए नकद का शत्रुओं द्वारा लूटा जाना। (रंगराजन, *op.cit.*)।

राज्य के राजस्व के स्त्रोतों का विस्तृत वर्णन मिलता है और इसमें मुकुट (राज) कृषि भूमि, खानों और धातु-कर्म, पशु-पालन, सिंचाई निर्माण कार्य, वनों, वस्त्र, मदिरा और नमक जैसे उद्योगों, नगरवधुओं, वेश्याओं और विनोदकों (मनोरंजकों), पणक्रिया (बाज़ी लगाना) और द्युतक्रीडा (जुआ) आदि से और इनके अतिरिक्त लेन-देन कर और सीमाकर, चुंगी, नागरिकों को राज्य द्वारा उपलब्ध सेवाओं के शुल्क और प्रभार और व्यापार पर कर आदि से राजस्व भी शामिल थे (*Ibid.*)।

बजट, लेखा और लेखा परीक्षा (Budget, Accounts and Audit)

बजट, जैसा कि हम पारम्परिक अर्थ में समझते हैं, एक वित्त-वर्ष के राजस्व और व्यय (खर्च) का विवरण है। यह स्वभावतः सभी स्त्रोतों से प्रवाहित होने वाली राजस्व की संभावित राशि और विभिन्न वस्तुओं पर किए जाने वाले कुल व्यय का एक आकलन है। बजट निर्माण और कार्यान्वयन के अनेक नए रूपों और सिद्धांतों के अपनाए जाने के बावजूद, इस प्रकार का बजट कार्य आजकल भी प्रचलित रहा है। बजट ने आय का विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया – चालू (वर्तमान), हस्तांतरित और फुटकर या विविध प्राप्तियाँ। फुटकर या विविध आय में निम्नलिखित शामिल थेः

- कर्ज तथा देय राशि की वसूली।
- सरकारी कर्मचारियों द्वारा भुगतान किया गया जुर्माना (अर्थदण्ड)।
- अधिभार, हानि अथवा क्षति के बदले में मिली क्षतिपूर्ति, उपहार, जब्त संपत्ति और खज़ाना; और
- विक्रय पर लाभ द्वारा आय।

व्यय या खर्च को विभिन्न शीर्षों के तहत (मदों के तहत) अलग से दर्शाया गया : आवंटित दैनिक व्यय, अनावंटित दैनिक व्यय और पूर्वानुमानित आवधिक (पाक्षिक, मासिक या वार्षिक) व्यय। इसके अतिरिक्त उपासना (पूजा) एवं दान, राजमहल, प्रशासन, विदेशी

मामलों, अन्न भंडार अनुरक्षण, आयुधागार (आयुध डिपो) और मालगोदाम, विनिर्माण, श्रम, रक्षा, मवेशी, वन और वन्यजीव अभ्यारण्य, और ईंधन की लकडी और चारा जैसे उपभोज्य वस्तुओं पर व्यय (*Ibid.*)।

वित्तीय उत्तरदायित्व राजकोषीय या राजवित्तीय मामलों के प्रशासन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा होता है। आय और व्यय का यथातथ्य, अनुरक्षण (सही हिसाब किताब रखना) बजट, राजस्व की वसूली और व्यय कार्य के प्रशासन से जुडे अधिकारियों की सत्यनिष्ठा, ईमानदारी और जिम्मेदारी की दिशा में सबसे महत्वपूर्ण कदमों में से एक है। कौटिल्य के समय में भी, बही खातों का सही या यथातथ्य हिसाब-किताब या अनुरक्षण अनिवार्य था। लेखा अधिकारियों की भी जिम्मेदारी थी कि वे हर महीने, समय पर लेखा प्रस्तुत करें अन्यथा वे दण्डित किए जाते थे।

लेखा अधिकारियों को एक प्रकार के आचरण-संहिंता का पालन करना पडता था। उन्हें नियत समय पर अपनी लेखा पुस्तिकाओं और कोष में प्रेषित की जाने वाली आय सहित, लेखा परीक्षण के लिए उपस्थित होना पड़ता था। लेखा परीक्षण अधिकारी द्वारा बुलाए जाने पर उन्हें लेखापरीक्षण के लिए तैयार होना पड़ता था। लेखा परीक्षण के दौरान लेखा के संबंध में पूछताछ किए जाने पर वे झूठ नहीं बोलेंगे (असत्य) और एक (छोडी हुई) प्रविष्टि या लेखी (एंट्रि) को इस प्रकार से अंतर्वेशिन करने का प्रयास नहीं करेंगे कि मानो वह अनजाने में हो गया हो। इन अध्यादेशों के पालन में चूकना दण्डनीय था। सभी उच्चस्तरीय अधिकारी अपनी लेखाओं को बिना असंगति या असत्य के, संपूर्ण रूप में प्रस्तुत करने के लिए जिम्मेदार थे। यदि वे ऐसा कोई कृत्य कर बैठे, तो वे सर्वोच्च स्तरीय प्रमाणिक दंड के भोगी होंगे। (विवरण के लिए देखें रंगराजन, *ibid.*)।

इस विवरण से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि लेखा परीक्षण लेखा से अलग था जो कि आधुनिक भारत में वित्तीय प्रशासन का एक लक्षण है। अनुशासन और कार्यकुशलता राज्य के द्वारा वित्तीय मामलों के प्रबंधन के हिस्से थे। निरीक्षकों की ओर से कार्य के प्रति उदासीनता, कर्तव्यत्याग (कर्तव्य के प्रति लापरवाही) और वित्तीय हानि पहुँचाना उन्हें नियमों द्वारा निर्धारित दण्ड का भोगी बना सकता था। उदाहरण के लिए, अपने कर्तव्यपालन में निरीक्षण द्वारा चूक या विफलता के कारण उत्पन्न हानि की भरपाई उसके सह-अधिकारियों, अधीनस्थों, जमानतों, पुत्रों, पुत्रियों और पत्नी इत्यादि के द्वारा की जानी थी। जो अधिकारी अपने अज्ञान, आलस्य (सुस्ती), कातरना (कायरता), कर्तव्य के प्रति लापरवाही, भ्रष्टाचार, चिड़चिड़ेपन, घमंड या लोभ के कारण राजकोष को हानि पहुँचाते थे, उन पर, उनके अपराध की घोरता और गंभीरता के अनुरूप जुर्माना लागू किया जाता था।

सरकार को ठगना अर्थात सरकार कर्मचारियों द्वारा सार्वजनिक धन का दुर्विनियोजन या जनता का शोषण ऐसे कृत्य थे जिन्हें गंभीर वित्तीय दुराचार समझा जाता था। कौटिल्य लोक सेवकों द्वारा गबन धोखेबाजी और चोरी के 40 तरीकों की सूची प्रस्तुत करते है। इस सूची में 10 तरीकों का संबंध अवरोधन (बाधन, बाधा डालना,), सरकारी संपति का निजी कार्य के लिए प्रयोग, तारीख या तिथि की जालसाज़ी, निर्धारित राजस्व से कम की वसूली या विनिहित व्यय से अधिक खर्च करना, दुर्विनियोजन के कृत्य जिसमें कोष को राजस्व का अवितरण, आय प्राप्ति का मिथ्या निरूपण (झूठा विवरण), धन के बदले उपकार/पक्षपात, किसी को किया जाने वाला भुगतान किसी अन्य को करना इत्यादि शामिल थे। उचित अन्वेषण और मुकदमें के पश्चात् ही दण्ड दिया जाना था।

बोध प्रश्न 4

नोट :क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से अपना उत्तर मिलाइए।

1) 'राज्य तथा उसके उपकरण के बारे में जो सब कुछ कौटिल्य लिखते हैं, उसके केन्द्र में वित्त और वित्तीय प्रशासन हैं।' विवेचन कीजिए।

.....

.....

.....

1.7 निष्कर्ष

अर्थशास्त्र में चित्रित प्रशासन के सिद्धांतों और संरचना के विवरण को पढ़ने के बाद, विशेष रूप से कौटिल्य के प्रशासन के लक्षणों के संदर्भ में और प्रशासन पर उनके विचारों की आज के समय में प्रासंगिकता के संबंध में हमें क्या शिक्षा मिलती है, पहले मामले में, हम उस प्राचीन समय में प्रशासनिक प्रणाली के मुख्य लक्ष्यों की निम्नलिखित रूप से पहचान कर सकते हैं, जब अर्थशास्त्र की रचना की गई थी :

- यह एक केन्द्रीयकृत प्रणाली थी।
- यह एक नौकरशाही प्रणाली थी।
- यह प्रशासन के सिद्धांतों पर संगठित की गई थी, जिसे आगे चल कर (बाद में) प्रशासनिक प्रबंधन विचारधारा से जुड़े अनेक प्रशासनिक विचारकों द्वारा प्रतिपादित किया गया।
- यह एक कल्याणकारी प्रशासन था। इसे हितकारी सत्तावादी प्रणाली का एक उदाहरण कहा जाता है।
- यह मंत्रणा या परामर्श द्वारा सरकार थी, क्योंकि मंत्रिपरिषद् के रूप में निर्णय लेने के लिए परामर्शी या सलाहकार तंत्र का विस्तृत उल्लेख पाया जाता है। यद्यपि उनके (मंत्रियों) द्वारा दी गई मंत्रणा और राजा द्वारा उनके परामर्श की विधि राजा पर बाध्य नहीं थी, फिर भी एक तर्कपूर्ण निर्णय पर पहुँचना अनिवार्य था।

यह पता चलता है कि उनके अनेक प्रशासनीय विचार उनके जीवनकाल में ही नहीं बल्कि आज के समय में भी प्रासंगिक हैं। उदाहरण के लिए, प्रशासन में भ्रष्टाचार के कारणों और उपाय (इलाज) का उनके द्वारा विवेकपूर्ण विश्लेषण और सुशासन पर उनका जोर, आज भी प्रासंगिक है। कौटिल्य का अर्थशास्त्र यह दर्शाता है कि भ्रष्टाचार से निपटने में शासन और प्रशासन की प्राचीन प्रणाली परिचालन दिशानिर्देशों के मामले में समसामयिक है। यह निश्चय ही विश्वसनीय तरीके से प्रदर्शित करता है कि भ्रष्टाचार केवल आधुनिक युग का अनन्य लक्षण नहीं है। यह यथार्थ कि यह खाता सदियों से विद्यमान है और पनपता (फलना-फूलना) रहा है, इसकी मज़बूती के बारे में श्रेष्ठ/उत्तम प्रमाण देना है। सभी ऐतिहासिक युगों की सरकारों ने इसकी अवैधता को स्वीकार किया है और इस समस्या से निपटने के लिए कानूनी उपकरणों को तैयार किया है, परन्तु वे समाज में इसके विस्तार (फैलाव) तथा स्वीकृति पर विजय नहीं पा सके हैं।

यद्यपि अर्थशास्त्र में सरंचानात्मक पहलूओं को जैसे दर्शाया गया है, उनका आधुनिक युग के भारतीय प्रसंग में कोई मूल्य (महत्व) नहीं है, परन्तु ऐसे अनेक देश है जो केन्दीकृत

प्रणालियों को विकेन्द्रीकृत प्रणालियों से अपेक्षाकृत अधिक पंसद करते है। विश्व के भिन्न-भिन्न भागों में राजतांत्रिक प्रणालियाँ कौटिल्य द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत का उपयोग कर सकती है और कर भी रही हैं। इस प्रकार, एक सशक्त राज्य की स्थापना में वित्त और वित्तीय प्रशासन के महत्व के बारे में उनके विचार उतने ही लागू होते हैं, जितने कि प्रशासन के सिद्धांतों पर उनके विचार। नेताओं के बारे में और एक नेता में आवश्यक गुणों की अपेक्षा के संबंध में उनके विचारों की, प्रशासन और प्रशासन और प्रबंधन के आधुनिक युग के एक विधार्थी द्वारा अवहेलना नहीं की जा सकती।

इसके अतिरिक्त, कौटिल्य ने एक कुशल, प्रभावशाली और अपने संगठन द्वारा जन-केन्द्रित प्रदर्शन के संगठनात्मक कार्य में व्यस्त लागों के मूल्यों, दृष्टिकोणों, गुणों और स्वभाव के महत्व की कल्पना की। शासन पद्धति के प्रकार को विचार में न लाकर, ईमानदारी, सत्यनिष्ठा और सत्यवादिता पर एकाग्रता (Focus) लोक प्रशासन में चिरस्थायी महत्व और चिन्ता के विषय हैं। किसी देश के वैश्विक प्रभाव के संबंध में भी, उनके विचार पर्थ-प्रदर्शक प्रतीत होते हैं, क्योंकि एक देश की वित्तीय और सैनिक मजबूती अब भी राष्ट्रों के समुदाय में निर्धारक भूमिका (निर्णयात्मक) निभाती है। फिर भी ग्रंथकार (लेखक) अपने समय के परिवेश से प्रभावित होता है। इसके बावजूद, यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि कौटिल्य ने कई तरीकों से अपने समय से आगे बढ़ते हुए भावी समाजों और राज्यों की प्रशासनिक आवश्यकताओं की ओर ध्यान दिया।

1.8 शब्दावली

अध्यक्ष : अधीक्षक

अमात्य : मंत्री

बंधनागाराध्यक्ष : कारागार या जेल का अधीक्षक

धर्म : नीतिशास्त्र तथा कर्तव्य

खानाध्यक्ष : रवानों का अधीक्षक

कोषाध्यक्ष : राजकोष या कोष का अध्यक्ष या खजांची

महामात्य : प्रधानमंत्री

न्याय : इन्साफ

समाहर्ता : महा-संग्रहकर्ता (समाहर्तृ)

सम्निधाता : महा-कोषापाल

स्थानिक : जिला अधीक्षक

1.9 संदर्भ लेख

Banerjee, P. N.(1916). *Public Administration* in *Ancient India,* London, U.K: Macmillan.

Kangle, R.P (1969). *Kautilyan Arthashastra*, Bombay, India: University of Bombay.

Kumud, R. M (1988). *Chandragupta Maurya and His Times.* New Delhi, India: Motilal Banarasidass.

Parmar, A.(1987).*Techniques of Statecraft: A Study of Kautilya's Arthashastra.* New Delhi, India:

Atma Ram Prasad, R.P et. al. (Eds.) (2010). *Administrative Thinkers*. New Delhi, India:

Sterling. Rangarajan, L N. (1992). *Kautilya, the Arthashastra*, London, U. K. Penguin Books.

Shamashastry, R. (1967). *Arthshastra of Kautilya.* University of Mysore, India: Oriental Library Publications.

Trauatmann, T. R. (1971). *Kautilya and Arthashastra: A Statistical Investigation*

1.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) आपके उत्तर में निम्न को शामिल होना चाहिए :

- आपको इकाई के 1.3 भाग में सम्मिलित (शामिल) सामग्री को उपयोग में लाना चाहिए। उत्तर का प्रारंभ एक प्रस्तावना से होना चाहिए, जिसके पश्चात् सिद्धांतों का वर्णन, अर्थशास्त्र में सरकार के उपकरण के संगठन और क्रिया के संबंध में चर्चा से जो अनुमानित होता है, उसके अनुसार किया जाना चाहिए।

बोध प्रश्न 2

1) आपके उत्तर में निम्न को शामिल होना चाहिए :

- आपके उत्तर में राजा की संस्था और साथ ही साथ अन्य विभागों व उनके अध्यक्षों की चर्चा या विवेचन शामिल किया जा सकता है। इस इकाई के भाग 1.4 में चर्चित सामग्री की सहायता ले सकते हैं।

बोध प्रश्न 3

1) आपके उत्तर में निम्न को शमिल होना चाहिए :

- वह एक कुलीन परिवार से होना चाहिए और प्रभावशाली होना चाहिए।
- वह कलाओं में अच्छी तरह से प्रशिक्षित होना चाहिए।
- उसमें दूरदर्शिता, निर्भीकता, विवेक, बुद्धि, उत्साह और उर्जा, प्रबल स्मरणशक्ति, चरित्र की पवित्रता, मान-मर्यादा और धैर्य, सौजन्रू (भद्रता) बल, स्वास्थ्य और वीरता के गुण होने चाहिए।
- उसे कुशल, वाक्पटु, निष्ठापूर्ण श्रद्धा में अग्रिम, उत्तम व्यवहार से संपन्न होना चाहिए।
- उसे अस्थिर चित्त, विलंबन (टाल-मटोल) और ऐसे गुणों से मुक्त होना चाहिए, जो द्वेष (घृणा) और शत्रुता को उत्तेजित करते हैं।

2) आपके उत्तर में निम्न को शामिल होना चाहिए :

- प्रशिक्षण हर किसी के लिए मुक्त नहीं होना चाहिए, केवल उनके लिए होना चाहिए जो अपने विचार और व्यवहार्य सामर्थ्यों और क्षमताओं को उन्नत करने और सुधारने के लिए इच्छुक हों।
- प्रशिक्षण के लिए केवल ऐसे प्रत्याशियों को चुना जाना चाहिए, जो सीखने की इच्छा रखते हों और एक अच्छे श्रोता के गुणों से संपन्न हों। इसके अतिरिक्त,

उनमें धारणा क्षमता (स्मरण शक्ति), चिंतन (विमर्श), समझदारी (विवेक), गलत अथवा असत्य की अस्वीकृति और किसी अन्य व्यक्ति के प्रति न होकर, सत्य के प्रति दृढ़संकल्पता के गुण भी होने चाहिए। अपने ज्ञानवर्धन के लिए, उनकी एकाग्रता जिज्ञासा व अभिप्रेरणा के गुणों पर आभारी थी।

बोध प्रश्न 4

1) आपके उत्तर में निम्न को शामिल होना चाहिए:

   क) वित्त का महत्व तथा राज्य की शक्ति और सत्ता का वित्तीय प्रबंधन;

   ख) प्रभावशाली वित्तीय प्रबंधन के लिए अनिवार्य कदमों की चर्चा; और

   ग) निष्कर्ष-इसके लिए आप इस इकाई के भाग 1.6 में दी गई सामग्री की सहायता ले सकते हैं।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 2 महात्मा गाँधी*

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 स्वराज पर गांधी के विचार

2.3 ट्रस्टीशिप पर गांधी के विचार

2.4 ट्रस्टीशिप का अमल

2.5 निष्कर्ष

2.6 शब्दावली

2.7 संदर्भ लेख

2.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के को पढ़ने के बाद, आप निम्न को समझ सकेंगे :

- गाँधी के अनुसार, ''स्वराज'' की मूल धारणा और सिद्धान्त;
- ट्रस्टीशिप पर गाँधी के विचार की व्याख्या; और
- गाँधी के विचारों का अनुभवजन्य परिपेक्ष्य।

2.1 प्रस्तावना

मोहनदास करमचंद गाँधी (1869-1948) आधुनिक भारत के करिश्माई नेता थे, जिनका कोई सानी नहीं है। वे केवल नेता ही नहीं थे अपितु एक दार्शनिक, चिन्तक, लेखक, सम्पादक और समाज सुधारक भी थे। गुजरात के व्यापारी परिवार में जन्में, उन्होंने अपने कानून की पढ़ाई दक्षिण अफ्रीका से पूरी की, 1896 से 1914 के बीच दक्षिण अफ्रिका में उन्होंने सत्यग्रह के माध्यम से अहिंसा, वाक स्वतन्त्रता, समानता और स्वराज के विचारों को लागू किया। दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद के खिलाफ बोएर युद्ध में एम्बूलंस कारप्स, फिनिक्स तथा टॉलस्टाय फार्म और ट्रान्सवाल में अभियान (Boer War, Experiments at Phoenix and Tolstoy Farms and Campaign in Transvaal), उनकी प्रमुख उपलब्धियां थी। भारत में राष्ट्रपिता के रूप में प्रख्यात गाँधी ने भारतीय स्वाधीनता संग्राम में अतुल्य योगदान दिया। ''सत्याग्रह'' अथवा अहिंसा से पूरे विश्व का ध्यान आकर्षित किया।

दर्शनशास्त्र तथा समाज विज्ञान पर गाँधी ने अनेकों लेख लिखे। उनके विचार धार्मिक तथा अंतःविशयी थे जो उनको लेखनी से स्पष्ट हैं। उन्होंने न्याय, समाज सुधार, सभ्यता, आर्थिक और सामजिक व्यवस्था और राष्ट्रीयता पर भी खूब लिखा। उनके भाषण, लेखनी, सम्पादकीय, मोनोग्राफ से उनके वैचारिक भिन्नता तथा उन पर उनकी पकड़ साफ

**योगदान* : डॉ. विजय श्रीवास्तव, सहायक प्रोफेसर, मित्तल स्कूल ऑफ बिज़नस, लवली प्रोफेश्नल विश्वविद्यालय, फग्वारा, पंजाब

झलकती है। वे तत्कालीन सामाजिक आर्थिक ढाँचे पर विद्वत्तापूर्ण ढंग से लिखते थे। उनके विचार एक दूसरे से जुड़े हुये थे। उनके प्रमुख लेख थे - 'हिन्द स्वराज', 'पंचायती राज', 'मेरे स्वप्न का भारत', 'सत्य के मेरे प्रयोग'(Hind Swaraj, 'Panchayati Raj', 'India of my Dreams', 'My Experiment with Truth')। इन पुस्तकों के अलावा उन्होंने ''यंग इण्डिया'', ''हरिजन'' तथा ''नवजीवन'' (Young India, Harijan, Navjeevan) समाचार पत्रों के सम्पादकीय में अपने विभिन्न विचार प्रस्तुत किये।

उनमें जो बात अन्य समाज शास्त्र के विद्वानों से अलग करती है, वह है उनका सामाजिक समस्याओं को लेकर पत्रकारिता का दृष्टीकोण। वे केवल सैद्धान्तिक विचारक ही नहीं थे अपितु एक अनुभवी विचारक थे। वे जिन सिद्धान्तों का प्रचार करते थे, उन्हें अपने जीवन शैली का अंग भी बनाते थे। इस इकाई में हम गाँधी के विचार एंव दर्शन की चर्चा करेंगे। ''स्वराज'' तथा ''न्यासिता'' या ट्रस्टीशिप पर प्रमुख रूप से चर्चा की जायेगी। साथ ही इन मूल्यों को साम्समयिक सामाजिक एंव राजनैतिक परिदृश्य से भी जोड़कर देखा जायेगा।

2.2 स्वराज पर गाँधी के विचार

गाँधी स्वराज तथा लोकतान्त्रिक मूल्यों में प्रबल विश्वास रखने वाले व्यक्ति थे, परन्तु लोकतन्त्र को लेकर उनके विचार पश्चिमी विचारकों से पृथक थे। गाँधी का ''स्वराज'' को लेकर विचार केवल उनके लेखनों का ही परिणाम नहीं हैं। गांधी के निधन के बाद, गाँधीवादी कार्यकर्त्ता एंव विदवानों ने इस धारणा को अत्यधिक फैलाया है, विशेष रूप से स्वतन्त्रता के बाद।

गाँधी वास्तव में भारत के ग्रामीण अंचलों में रहने वाले लोगों का ''स्वराज'' चाहते थे। उनका मानना था कि भारत की आत्मा उसके गांवों में बसती है। वे सत्ता का प्रवाह नीचे से चाहते थे। वे भारत में वास्तविक लोकतन्त्र चाहते थे। उन्होंने कहा था, ''वास्तविक लोकतन्त्र केन्द्र में बैठे 20 लोगों द्वारा नहीं चलाई जा सकती है। वह नीचे से, गांव के प्रत्येक व्यक्ति द्वारा चलाई जानी चाहिये।''

वे ''ग्रामीण गणतन्त्र'' की कल्पना करते थे। ''पंचायती राज ही वास्तविक लोकतन्त्र को दर्शाता है। सबसे निम्न भारतीय को राजा के बराबर माना जाय'' (गाँधी, 1962)। महात्मा गाँधी ने पंचायती राज का समर्थन किया जहाँ विकेन्द्रित सरकार होगी। प्रत्येक गांव अपने विकास के लिये स्वंय जिम्मेदार होगा। इस विचाार को ''ग्राम स्वराज'' का नाम दिया गया। वे चाहते थे कि राजनैतिक सत्ता भारत के गांवों में बांटी जाये। वे लोकतन्त्र के लिए ''स्वराज'' शब्द का उपयोग उपयुक्त मानते थे। यह लोकतन्त्र स्वाधीनता पर आधारित थी। व्यक्तिगत स्वतंन्त्रता, स्वाध्यायी, स्वशासी, आत्मा–निर्भर समाज जहां व्यक्ति को सहभागीता का अवसर प्रदान किया जाए, वहीं संभव है (रॉय–Roy, 1984)। गाँधी (1962, *op.cit.*) के अनुसार, ''ग्राम स्वराज की मेरी कल्पना ऐसे पूर्ण गणतन्त्र की है, जो अपनी आवश्कताओं के लिये अपने पड़ोसी पर आश्रित न हो परन्तु परस्पर निर्भरता हो जहाँ आवश्कता हो। ''गाँधी का ग्राम स्वराज मानव केन्द्रित, गैर-शोषणकारी, विकेन्द्रित सरल ग्रामीण अर्थव्यवस्था है, जहाँ प्रत्येक नागरिक को पूर्ण रोजगार प्राप्त हो। स्वैच्छिक सहभागिता हो ताकि भोजन, कपड़े तथा अन्य आवश्यकताओं के लिए आत्म-निर्भर हों।

गाँधी का सपना था कि लोकतन्त्र में जनसमुदाय का समागम केवल ग्राम स्वराज से ही सम्भव था। वे गांव में ग्राम स्वराज चाहते थे, जहाँ ग्राम गणतन्त्र होगा और सभी कार्यों का प्रबन्धन आम जन मानस द्वारा किया जायेगा। उनके अनुसार, ग्राम स्वराज के अन्तर्गत, ''प्रत्येक गांव लोकतान्त्रिक होगा जहाँ बढ़ी जरूरतों के लिए भी वे अपने पड़ोसी

पर आश्रित नहीं होंगे।'' कोई भी व्यक्ति भूखा अथवा वस्त्रहीन नहीं होगा। प्रत्येक व्यक्ति के पास अपनी आवश्यकताओं को पूर्ण करने लायक काम होगे। यह तभी संभव है जब उत्पादन के साधन जनता के अधिकार में हो (जोशी –Joshi, 2002)। गाँधी के ''स्वराज'' के विचार में ''आदर्श गांव'' अथवा ''ग्रामीण गणतन्त्र'' मुख्य हैं। आदर्श गांव में अहिंसा के साथ सामाजिक और आर्थिक ढांचा होगा और आवश्यक वस्तुओं का उत्पादन लघु तथा कुटीर उद्योग द्वारा किया जायेगा। इसका अर्थ हैं ''उत्पादन के साधन का विकेन्द्रीकरण किये बगैर आदर्श गांव का निमार्ण असम्भव है।'' अन्य शब्दों में ''विकेन्द्रीकरण आर्थिक ढाँचे के लिए आदर्श गांव आवश्यक हैं'' (गाँधी, 1958)। गाँधी के आदर्श गांव की परिकल्पना में राजनैतिक ढाँचा, आर्थिक ढाँचे के बिना संभव नहीं है।

गाँधी (*ibid.*), ''मेरे आदर्श गांव में बुद्विमान लोग होंगे, वे जानवरों की तरह गंदगी तथा अंधकार में नहीं रहेंगे। महिला तथा पुरूष स्वतन्त्र होंगे तथा विश्व में किसी से भी कम नहीं होंगे। हैज़ा, प्लेग, चेचक नहीं होगा, न ही कोई व्यक्ति बेकार होगा और न ही कोई विलासिता में रहेगा। प्रत्येक व्यक्ति को श्रमदान करना होगा। रेल, डाक तार की कल्पना होगी''। सरल शब्दों में कहा जाए तो गाँधी का आदर्श गांव आत्म निर्भर होगा–भोजन, कपड़ा (खादी), स्वच्छ जल, सफाई, गृह निर्माण, शिक्षा, सरकार तथा रक्षा सभी का प्रावधान किया जायेगा।

ग्रामीण पंचायत के द्वारा उन्होंने विकेन्द्रीकरण के लिये अपना प्रबल पक्ष रखा। ग्राम स्वराज का मूल मंत्र है कि प्रत्येक गांव अपना ''गणतन्त्र'' हो। उन्होंने नीचे से ऊपर जाने की बात कहीं। स्वतन्त्रता का प्रारम्भ नीचे से होना चाहिये। अतः प्रत्येक गांव गणतन्त्र अथवा पंचायत होगा, जिसके पास सभी अधिकार होंगे।

गाँधी का ग्राम स्वराज पुराने ग्रामीण पंचायती व्यवस्था का पुनः उत्थान नहीं था, अपितु नये स्वतन्त्र ग्रामीण इकाई को वर्तमान ''स्वराज'' के परिपक्ष्य में स्थापना थी। सभी गांवों को स्व-संचालित होना होगा जो स्वंय ही रक्षा करने में भी संक्षम हो। उन्हें रक्षा के गुण सिखाये जायंगे और रक्षा न कर पाने पर समाप्त होना होगा। अतः अन्तोगत्वा ''व्यक्ति'' ही इकाई है।

गाँधी ने स्वतन्त्र भारत के लिए ऐसे सरकार को परिकल्पना की जो स्वायत्तशासन के सिद्धान्त पर आधारित हो। ऐसी सरकार में स्व-केन्द्रित की श्रेष्ठता एंव स्वार्थपरायण स्वचालित होंगे। ऐसे समाज में जहाँ नागरिक समाज के लिये जिम्मेदार हो और नैतिक रूप से अनुशासित हो तो शायद उसे ''सरकार'' की आवश्यकता ही न हो। एक गैर सरकारी, व्यवस्थित समाज ही ''स्वराजय'' हैं। गाँधी ने आदेशित अराजकता को प्राथमिकता दी जहाँ नागरिकों के पास पूर्ण स्वतन्त्रता हो और न्यूनतम राज्य। आदेश हो (पारेख, Parekh, 1989; इग्नू की विषय सामग्री से अनुकुलित, 2011)

गाँधी के आधुनिक व्यवस्थित समाज के सिद्धान्त हैं :

- अहिंसा (Non-violence)
- व्यक्ति के स्वत्व अधिकार (The Autonomy of the Individual)
- जन साधारण में सत्ता का अहसास (Sense of Power among People)
- सबल स्थानीय संचार (Strong Local Communication)
- लोगों में आपसी सहयोग (Cooperation among People)
- साक्षरता की प्राप्ति (Literacy Requirement)
- भारतीय संस्कृति का पुनर्जन्म (Regeneration of Indian Culture)

- राष्ट्रीय एकता (National Unity)
- स्थानीय, समुदाय जो स्वशासी होते हुये, केन्द्रीय सरकार के रूप में हो परन्तु अधिकार का केन्द्र न हो (इग्नू की सामग्री से अनुकूलित, *ibid.*)

गाँधी का विश्वास था कि ग्रामीण समुदाय समय के साथ स्थानीय ताकत और एकजुटता को प्रबल भावना को जन्म देगा। सार्थक पारस्परिक संबंध होंगे, सामाजिक जिम्मेदारी की भावना को बढ़ावा देगा तथा नागरिक गुणों की नर्सरी के रूप में उभरेगा। आत्म-निर्भर गांव के अलावा देश को विस्तारित चक्र के रूप में संगठिन किया जायेगा। गांव का समूह तालुका, तालुका का समूह जिला, जिला-प्रांत के रूप में संगठित किये जायेंगे। इनका प्रबंधन इकाई से चुने गये प्रतिनिधि करेंगे। सभी इकाई स्वशासित होगी परन्तु इनमें समुदाय की भावना होगी। प्रत्येक प्रांत को देश के संविधान के अनुरूप, अपने संविधान बनाने की स्वतन्त्रता होगी (पारेख, इग्नू सामग्री, *op.cit.*)

गाँधी का राजनैतिक दर्शन ''स्वराज'' पर केन्द्रित रहा। कई विद्वानों के अनुसार ''स्वराज मूलभूत अवधारणा हैं'' महात्मा गाँधी की 'अहिंसा', क्योंकि अहिंसा मात्र एक जरिया है ''स्वराज'' प्राप्त करने के लिए। ''स्वराज'' प्रत्येक व्यक्ति की स्थिति एंव जीवित रहने का मार्ग हैं (परेल-Parel, इग्नू सामग्री 2000 से उदाहरण)। हम पाते है कि गाँधी ने विभिन्न परिस्थितियों में ''स्वराज'' के विभिन्न अर्थों का आह्वान किया है।

- विदेशियों से देश को स्वतन्त्र करने के लिए ''स्वराज''।
- व्यक्ति की स्वतन्त्रता को दर्शाने के लिए।
- व्यक्ति के आर्थिक स्वतन्त्रता का आश्वासन।
- आध्यात्मिक स्वतन्त्रता अथवा व्यक्ति के स्वशासी होने के अर्थ में (इग्नू सामग्री, *op.cit.*)

राजनैतिक परिदृश्य में स्वायत्ता, गाँधी के ''स्वराज'' को अर्थ प्रदान करता हैं। उनके द्वारा स्वतन्त्रता के लिए भी कई नियम-शर्ते रखी गयी। यंग इण्डिया (6 अगस्त, 1925) में उन्होंने लिखा, ''स्व-शासन का अर्थ है सरकारी नियन्त्रण से स्वतन्त्र होने का सत्त प्रयास, चाहे वह विदेशी सरकार हो अथवा राष्ट्रीय। स्वराज सरकार में यदि जनमानस प्रत्येक परिस्थिति में नियमों पर आधारित हो तो यह दुर्भाग्यपूर्ण होगा।'' गाँधी ने स्वायत्तता के लिए अहिंसा को ही एक मात्र रास्ता बताया– ''हिंसा से प्राप्त किया गया स्वराज, हिंसक स्वराज ही होगा। यह भारत तथा विश्व के लिए खतरा होगा।'' (यंग इण्डिया–Young India) में गाँधी का लेख, 17 जुलाई 1924, (इग्नू सामग्री, *op.cit.*)

बोध प्रश्न 1

नोट : (i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

(ii) इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से अपना उत्तर मिलाइए।

1) स्वराज को लेकर गाँधी की परिकल्पना को समझाइये।

.....

.....

.....

2.3 ट्रस्टीशिप पर गाँधी के विचार

ट्रस्टीशिप (Trusteeship) का उत्थान गाँधी की 3 अवधारणाओं से होता है, अहिंसा, स्वराज तथा समानता–यह सभी एक दूसरे से जुड़ी हुई हैं। ट्रस्टीशिप का सिद्धान्त शोषणमुक्त

आर्थिक चक्र की बात करता है। वे इस हिंसक चक्र को अहिंसक आर्थिक चक्र में परिवर्तित करना चाहते थे। गाँधी के अनुसार, केवल श्रम और पूँजी के बीच ही गतिरोध नहीं हैं, अपितु आवश्यकता और विलासिता के बीच भी टकराव हैं।

राजनैतिक दर्शन में गांधी की ट्रस्टीशिप सिद्धान्त एक बहुत बढ़ा योगदान है। उनके राजनैतिक दर्शन का ही यह एक आर्थिक अंग है। इस सिद्धान्त के केन्द्र में सामाजिक साधनों को एक न्यास (Trust) के रूप में रखना है और इस न्यास का ट्रस्टी मनुष्य होगा। ऐसा करने से प्रकृति और समाज के साधन सभी में समान रूप से वितरित होगें। इस सिद्धान्त का लक्ष्य था पूँजीवाद और साम्यवाद दोनों के गुणों को साथ लाना और सम्पत्ति का राष्ट्रीयकरण करना। गाँधी का मानना था कि भौतिक सम्पत्ति समाज का न्यास है। व्यक्ति को केवल उतना ही लेना चाहिये जितना उसके सुविधाजनक जीवन यापन के लिये आवश्यक है। समाज के अन्य लोग, जो उस सम्पत्ति से जुड़ें हुये हैं, वे ही इसके प्रबंधन के लिये जिम्मेदार हैं तथा सभी के लिए कल्याणकारी योजना तैयार करेंगे। ट्रस्टीशिप की अवधारणा गांधी के विचार एवं राज्य की भूमिका में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। ट्रस्टीशिप के सिद्धान्त की जड़े गांधी के शोषण और असमानता के विचारों से बंधी है। अन्य शब्दों में यह गांधी के समानता, न्याय और संघर्ष के विचारों को टटोलता है। गांधी के राजनैतिक अर्थशास्त्र में, ट्रस्टीशिप की अवधारणा एक प्रमुख स्थान रखती है जो एक गैर–शोषणमुक्त समाज के निर्माण हेतु आवश्यक है (रमेश तथा लुत्ज-Ramesh and Lutz, 1980)। इसके अन्तर्गत समान अपरिग्रह की अवधारणा भी जुड़ी हुई हैं। यह व्यवस्था पूँजीकरण के एक विकल्प के रूप में सामने आई। श्रम तथा पूँजी के बीच संघर्ष का एक मुख्य कारण बढ़ती आर्थिक असमानता है। संसाधन तथा आय के एवं श्रम और पूँजी के बीच असमान वितरण से आर्थिक असमानता उत्पन्न होती है। सर्वहारा वर्ग के शोषण का यह मूल कारण है।

गांधी के ट्रस्टीशिप सिद्धान्त के पीछे दार्शनिक आधार हैं। यह अवधारणा नयी नहीं है परन्तु इन्होंने इस नये रूप से प्रस्तुत किया। दुनिया के सभी धर्मों में सरल जीवन शैली और मोह-मुक्त होने की बात कही गयी है। गांधी के अहिंसावादी अर्थव्यस्था में जिस अध्यात्मिक मनुष्य की बात कही गयी है, वहीं बात हिन्दु, बुद्व और इस्लाम धर्म में भी कही गयी है। श्रीमद् भगवत पुराण में यह लिखा हुआ है कि मनुष्य को अपने जरूरत से अधिक नहीं कमाना चाहिये। विलासितापूर्ण जीवन ही सभी आर्थिक असमानता की जड़ है, जो शोषण को जन्म देता है। ''मनुष्य को अपनी जरूरत के अनुरूप लेने की अनुमति है, परन्तु जो भी इससे अधिक लेता है वह मोह है और उसे इस बात की सजा मिलनी चाहिये। गांधी ने स्वीकारा कि मोह मुक्त अवधारणा को उन्होंने भगवद् गीता से ही लिया है। भगवद् गीता के पाठ से ही उन्हे अपरिग्रह तथा समभाव का दर्शन भी प्राप्त हुआ। अपनी आत्मकथा में उन्होंने लिखा हैं कि ''न्यास'' शब्द का सही अर्थ उन्हें भगवद् गीता से मिला और इसी शब्द ने उनके लिये ''मोह मुक्त'' जीवन की समस्या का हल दिया। गांधी के आध्यात्मिक उत्तराधिकारी और भूटान आन्दोलन के प्रणेता विनोबा भावे भी भागवद् गीता से प्रेरित थे। सर्वोदय के दर्शन में उन्होंने विश्वस्तावृत्ति शब्द को प्रयोग किया।

विनोभा भावे (Vinoba Bhave, 2007) लिखते हैं, ''निष्कर्ष यह हैं कि जो भी शारीरिक बल, धन या अन्य क्षमताएँ हैं, वह विश्व की धरोहर हैं, जो व्यक्ति के पास विश्व के विकास के लिये न्यास में रखी गयी हैं। ट्रस्टीशिप का यही महान विचार है। परन्तु स्वार्थी लोगों ने इस शब्द का इतना दुर्व्यवहार किया है कि इसे मौलिक अस्तित्व में पहुँचा पाना असंभव सा लगता हैं। इसलिए मैंने इसके लिए विश्वस्तवृत्ति शब्द का प्रयोग किया है, जिसका अर्थ है विश्वास का मनोभाव – ऐसा शब्द जिसके साथ अवांछित अर्थों का साथ न हो।

ज्ञान के स्थान पर अधिकार, सत्ता, वित्त, महिमा ने मानव समाज में सड़न पैदा कर दी है। ट्रस्टीशिप का सिद्धान्त ''मैं'' को ''हम'' में परिवर्तित करता है। के. जी मशरूवाला (K.G. Mashruwala) लिखते हैं, ''ट्रस्टीशिप का सिद्धान्त निजी और गैर-निजी सम्पत्ति के बीच अन्तर नहीं करता। सभी सम्पत्ति न्यास के पास है, इस बात की परवाह किये बिना की वह किसके अधिकार में है। यह सिद्धान्त केवल मूर्त और हस्तांतरणीय सम्पत्ति पर ही लागू नहीं होती अपितु अमूर्त और गैर/हस्तांतरणीय सम्पत्ति पर भी लागू होती है जैसे शारीरिक बल या हेलेन केलर की क्षमता। सभी मनुष्य जो मानसिक रूप से स्वस्थ्य हैं वे केवल ट्रस्टी है'' (इग्नू, *op.cit.*)

इस बात का उल्लेख करना बहुत आवश्यक हैं कि गांधी के अहिंसावादी सामाजिक आर्थिक मॉडल की स्थापना आधुनिक लघु उद्योग और श्रम साधन उद्योगों की स्थापना से की जा सकती है, जो समानता और विकास को बढ़ावा देंगे। गांधी आधुनिक औद्योगिकरण या भारी उद्योगों के हित में नहीं थे। उन्होंने ग्रामीण औद्योगिकरण को अधिक महत्व दिया जो ट्रस्टीशिप सिद्धान्त का भी आधार हैं। श्रम और पूँजी के बीच सौहार्द सम्बंध, गैर-मशीनी अथवा मनुष्य प्रेमी मशीनी व्यवस्था में ही संभव है।

ट्रस्टीशिप के सिद्धान्त में गांधी श्रम और पूँजी के बीच गैर-मशीनी संबध (व्यवस्था) स्थापित करना चाहते थे। वे कार्ल मार्क्स की तरह पूँजीवाद अथवा बुर्जुआ वर्ग को समाप्त नहीं करना चाहते थे। न्यास की भावना से वह पूँजीवाद के दुष्परिणाम को दूर करना चाहते थे। जिन उद्योगों में पूँजी का पैमाना अधिक होता है, वहां श्रम और पूँजी के बीच तालमेल बैठा पाना मुश्किल है क्योंकि वहां अलगाव (Alienation) की भावना हैं (इस शब्द के जनक कार्ल मार्क्स हैं)। गांधी का उद्देश्य था अहिंसा द्वारा इस ''अलगाव'' की भावना को समाप्त करना। गहन तकनीकि उद्योगों में पूँजीपतियों द्वारा श्रम के शोषण के कारण अलगावाद पैदा होता है।

गुप्ता (Gupta, 1996) ने इस दिशा में लिखा कि ''पूँजीपति श्रमिक से अत्याधिक कार्य कराते हैं और न्यूनतम भुगतान करते हैं। श्रमिक इसलिए अपना न्यूनतम देना चाहता हैं''। गांधीवाद में श्रम और पूँजी दोनों के ही संतुष्टि का स्थान है। वर्तमान स्थिति में, पूँजीपति लोभ और लाभ के कारण असंतुष्ट हैं और श्रमिक अपने शोषण के कारण असंतुष्ट हैं। (गांधी, 1921)

गांधी यह बखूबी जानते थे कि न्यास के उचित प्रबंधन के लिए हिंसा और जोर आज़माईश की कोई जगह नहीं है। गांधीवाद के आदर्श समाज में, उद्योग श्रमिक का मित्र है न कि मालिक का। मिल या उद्योग का प्रबंधन अहिंसा या सहकारी परिवेश में होना चाहिये। श्रम और पूँजी के बीच संघर्ष का कोई स्थान नहीं है (दासगुप्ता-*Dasgupta, op.cit.*)

ट्रस्टीशिप सिद्धान्त का एक आयाम श्रम और पूँजी के बीच की आर्थिक संघर्ष भी हैं। पूँजी और धन मुख्यतः पूँजीपतियों के पास केन्द्रित रहता है, जो संघर्ष का मुख्य कारण हैं और कई बार यह संघर्ष हिंसक हो जाता है। इन मुद्दों पर गांधी ने लिखा, ''अधिक समानता अहिंसावादी स्वतन्त्रता का मूल हैं। आर्थिक समानता के लिये यह आवश्यक है कि आदिकाल से श्रम और पूँजी के बीच के संघर्ष को समाप्त करना। इसके लिये यह आवश्यक है कि कुछ अमीर लोग जिनके पास राष्ट्र का अधिकांश धन केन्द्रित है उसे कम करना और जो लाखों भूखे-नंगे हैं उनके हाथ में धन देना (इग्नू सामाग्री, *op.cit.*)।

औद्योगिक इकाइयों का सहकारी प्रबंधन ट्रस्टीशिप सिद्धान्त का एक महत्वपूर्ण भाग है। धन और सम्पत्ति का विकेन्द्रकरण कर प्रबंधन करना, गांधीवाद का दर्शन है, श्रम और पूँजी के सम्बन्ध में वे स्पष्ट थे कि किस प्रकार श्रम को उत्पादन तथा प्रबंधन प्रक्रिया का भाग

बनाया जाये। धन और लाभ के सहकारी प्रबंधन का अर्थ है व्यक्तिगत स्वामित्व को और शोषणकारी आर्थिक प्रणाली को समाप्त करना। इसी कारण दोनों पक्षों के बीच अलगाव पैदा होता है। गांधी के शब्दों में ''उद्योगों के विकास के लिये यह महत्वपूर्ण है कि कर्मचारियों को अंशधारियों के समान माना जाय और इसलिये उन्हें मिल की सभी गतिविधियों की सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त करने का पूर्ण अधिकार हैं'' (गांधी, 1921)

सेठी (Sethi, 1978) में अपनी पुस्तक ''गांधी टूडे'' में ट्रस्टीशिप को ''भव्य विकल्प'' बताया। ट्रस्टीशिप को औद्योगिक समस्या तथा मजदूर और पूँजी के संघर्ष के लिये राजनैतिक औज़ार बताते हुये सेठी लिखते हैं, ''ट्रस्टीशिप राज्य सत्ता के दमन के विरोध और कर्मचारियों के अलगाववाद का बुलवर्क (Bulwork) है, वैसे ही जैसे वह पूजीवादियों को जिम्मेदार सामाजिक भूमिका निभाने के लिए एक अस्थायी भूमिका प्रदान करता है।यह बताया गया है कि ट्रस्टीशिप की अवधारणा ने कई समाजवादियों को रोमांचित किया, जिन्होंने गांधी के साथ इस विषय पर सापेक्ष लंबी चर्चा की। परिणामस्वरूप, ड्राफ्ट तैयार किया गया जिसे बाद में गांधी ने सुधारा ताकि समानता के उद्देश्य को और बल दिया जा सके। अंतिम ड्राफ्ट कुछ इस प्रकार थाः

- ट्रस्टीशिप के द्वारा वर्तमान पूँजीवादी समाज को समान समाज में परिवर्तित किया जा सकता हैं। यह पूँजीवाद की आलोचना नहीं है, अपितु, स्वामित्व वर्ग को एक अवसर प्रदान करता हैं अपने आप को सुधारने का।
- केवल समाज के कल्याण के लिये ही व्यक्तिगत स्वामित्व की अनुमति दी जा सकती है।
- विधान के द्वारा अनुमोदित धन का स्वामित्व तथा उपयोग को मना नहीं किया गया।
- राज्य द्वारा शासित ट्रस्टीशिप के अन्तर्गत व्यक्ति को अपने स्वार्थ के लिये धन का स्वामित्व अथवा उपयोग की अनुमति नहीं है।
- न्यूनतम वेतन तय किया जायेगा जो सामान्य जीवन यापन के लिये पर्याप्त होगा। इसी प्रकार किसी व्यक्ति के अधिकतम आय भी तय की जायेगी। इस न्यूनतम तथा अधिकतम के बीच के अन्तर को सत्त रूप से कम करने की कोशिश की जायेगी।
- गांधीवाद के अनुसार समाज की आवश्यकता के अनुसार किया जायेगा न कि व्यक्तिगत पंसद के अनुसार (पारेख, 1989; इग्नू विषय सामाग्री, *op.cit.*)

2.4 ट्रस्टीशिप का अमल

गांधीवाद के अनुसार सम्पत्ति का स्वामित्व मना है और सम्पत्ति के प्रति लालच ही समाज में हिंसा को जन्म देता है। भारत में भूमि सुधार के जनक, विनोभा भावे ने असल में ट्रस्टीशिप को अमल में लाया और कुछ हद तक सम्पत्ति के आधार पर आर्थिक असमानता को कम करने में कामयाब रहे। भावे (1967) का मानना था, ''ट्रस्टीशिप को स्वीकारने से धन और व्यक्ति तथा समाज के बीच सम्बन्ध को देखने और समझने में एक बड़ा अन्तर आ जायेगा।''

विनोभा भावे, गांधी के ट्रस्टीशिप शब्द के उपयोग से सहमत नहीं थे। उन्होंने शब्द दिया ''विश्वास्तावृत्ति'' (Vishwashvratie) जिसका अर्थ हैं जनता का व्यापारी वर्ग (Vanik) पर ''विश्वास''। भूटान आन्दोलन के समय विनोभा जी का ध्यान केवल भूमि सुधार पर ही नहीं था, वे समाज में अशांति और असमानता को दूर करने पर भी काम कर रहे थे। उनके लिये ट्रस्टीशिप एक दर्शन के रूप में वह माध्यम था जिससे सामाजिक अशांति को दूर

किया जा सकता है। उन्होंने कहा ''यदि हम अहिंसावादी समाज की रचना करना चाहते हैं, तो हमें गैर-अधिकार को ध्यान में रखना होगा। जिनके पास अधिक सम्पत्ति है, उन्हें उसका ट्रस्टी बनना होगा। इस प्रकार ही अहिंसावादी समाज की रचना होगी नहीं तो अशांति बढ़ती रहेगी।'' (भावे, *ibid.*)

भूदान ग्रामदान आंदोलन से ट्रस्टीशिप को अमल में लाने से अमीर और गरीब के बीच सम्पत्ति का पूनर्वितरण देखा जा सकता है। गांधीवाद में कोई भी परिवर्तन तभी स्वीकार योग्य है जब वह अहिंसक हो। इसी प्रकार ट्रस्टीशिप सिद्धान्त किसी भी प्रकार के स्वाम्तिव की अनुमति नहीं देता। यदि किसी भी घटना अथवा मुद्दों के कई पक्षकार हैं तो सहकारिता ही उसका उत्तर है। विनोभा भावे चाहते थे कि जो अहिंसावादी समाज की रचना हो, उससे सभी की भागीदारिता स्वैच्छिक हो। गांधी की तरह विनोभा भावे भी विधिपूर्वक अथवा जबरदस्ती सहयोग के खिलाफ थे। उनके लिए ''स्वैच्छिक भूमि के स्वामित्व का दान ही ग्रामदान का आधार है'' (चोकर–Choker, 2011), ग्रामदान आन्दोलन के पीछे मुख्य उद्देश्य था गरीबी को दूर करना। उनका मानना था कि स्वामित्व के त्याग से गंभीर गरीबी को दूर किया जा सकता है। ग्रामदान ट्रस्टीशिप सिद्धान्त का प्रयोगसिद्ध अमल था। गरीब और अमीर दोनों के ही मन में स्वामित्व की भावना नहीं होनी चाहिये।'' यदि गरीब अपना स्वामित्व पहले नहीं छोड़ेगे तो कौन छोड़ेगा ? अमीर व्यक्ति का स्वामित्व अपने आप चला जायेगा परन्तु गरीब को अपने अधिकार स्वैच्छिक छोड़ने होगे। भारत का यह सौभाग्य था कि कुछ अमीर व्यक्तियों ने भी अपने अधिकार छोड़ दिये। परन्तु इस भावना पर बहुत अधिक विश्वास नहीं किया ,जा सकता है। इसलिए जरूरी है कि अमीर वर्ग की सहानुभूति जितनी हो उतनी ले ली जाये, परन्तु सबसे बेहतर उपाय है कि गरीब अपने स्वामित्व को त्याग दें।'' (देशपांडे–Deshpande, 2011)

विनोभा भावे के ट्रस्टीशिप सिद्धान्त के सामाजिक अमल पर टिकर्स (Tickers, 1970) ने लिखा, ''विनोभा के आन्दोलन के पीछे मुख्य प्रेरणा स्रोत ट्रस्टीशिप सिद्धान्त है। भूदान और ग्रामदान आन्दोलन में उन्होंने पदयात्रा कर लोगों से भूदान और धनदान करने को कहा।'' स्वामित्व को समाप्त करने से साधनों का उपयुक्त वितरण संभव हैं। गांधीवादी अहिंसक आर्थिक प्रणाली में सम्पत्ति पर समाज का अधिकार है। पूरा गांव भूमि का उपयोग समाज के कल्याण और बेहतरी के लिए कर सकता है। यदि सभी अपने आप को सेवक माने न कि मालिक तो हिंसा का जन्म नहीं होगा ये एक उपयुक्त उदाहरण है। गांधीवाद के द्वारा सभी भूमि और सम्पत्ति की समस्याओं को सुलझाने के लिए।

बोध प्रश्न 2

नोट :क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1. गांधी के ट्रस्टीशिप सिद्धान्त से आप क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

2. विनोभा भावे ने किस प्रकार ट्रस्टीशिप की ओर अपना योगदान दिया?

.....

.....

.....

2.5 निष्कर्ष

गांधी अपने समय के सबसे बड़े दार्शनिक थे। उनके विचार 1900 के प्रारम्भिक दौर में काल्पनिक लगते थे पर बड़े ही प्रगतिशील थे। उन्होंने न केवल अंग्रेजों के खिलाफ स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लिया, अपितु सरल जीवन शैली और उच्च विचार भी सिखाये। राजनीति शास्त्र और लोक प्रशासन में ''स्वराज'' का विचार अहम स्थान रखता है। गांधी के ग्राम स्वराज के स्वप्न को वास्तविक बनाने के लिये तीन स्तरीय पंचायती राज प्रणाली को लागू किया गया ताकि लोगों को लोकतन्त्र में भागीदारिता रहे। पंचायती राज व्यवस्था का मुख्य उद्देश्य है प्रत्येक व्यक्ति के द्वार तक प्रशा,सन को पहुँचाया जा सके। ट्रस्टीशिप पर गांधी के विचार एक ऐसी सत्ता की बात करते हैं जहां समानता और नैतिकता हो। विनोभा भावे ने भूदान आंदोलन से ट्रस्टीशिप सिद्धान्त को लागू किया। यह इस बात को सिद्व करता है कि गांधी के विचार आज के समय में भी प्रभावी है। वे एक महान दार्शनिक थे जिनके विचार को जिन्दगी में लागू करके देखा जा चुका है। इस इकाई ने गांधी के स्वराज, अंहिसा, समानता, स्वतन्त्रता, ट्रस्टीशिप तथा विकेन्द्रीकरण के विचारों पर ध्यान आकर्षित किया है।

2.6 शब्दावली

अलगाव (Alienation) : एक ऐसी स्थिति जिसमें पृथक्करण हो। कार्ल मार्क्स इसे वह स्थिति बताते हैं, जब व्यक्ति अपने परिवेश से अलग-थलग महसूस करता हैं क्योंकि वह एक विभाजित असमान समाज में रहता है।

रंगभेद (Apartheid) : एक प्रणाली जहां संस्थागत जातीय अंतर और विभेद हैं। दक्षिण अफ्रिका में यह 1948 से 1994 तक रहा।

बोएर युद्ध (Boer War) : यह युद्व अंग्रेज तथा दक्षिण अफ्रिका के दो बोएर राज्य साऊथ अफ्रिका रिपब्लिक तथा ऑरेंज फ्री स्टेट के बीच लड़ी गयी।

ग्राम स्वराज (Gram Swaraj) : इसका अर्थ है गांव का स्वयं का राज। इसमें सभी गांव का अपना गणतन्त्र होगा और भोजन, कपड़े और शिक्षा में वह आत्म निर्भर होंगे।

सत्याग्रह (Satyagraha) : यह विरोध का अहिंसावादी हथियार है। इस शब्द के जनक गांधी थे। इसका अर्थ है सत्य पर जोर।

ग्राम गणतन्त्र (Village Republic) : गांधी के विचारों में प्रत्येक का गांव जिसने स्वराज पा लिया है, वह गणतन्त्र है। एक आत्मनिर्भर, स्वशासी गांव गणतन्त्र है।

2.7 संदर्भ लेख

Bhave, V. (1967). *Vinoba Pravachan.* Varanasi, India: Sarv Sewa Sangh Prakashan. 30th October.

Bhole, L.M . (2000). Essays on Gandhian Socio-Economic Thought, New Delhi, India: Shipra Publications :111-112.

Cholkar, P (2010). *Bhoodan – Gramdan Movement: An Overview*, Anasakti Darshan, June-July:14.

Dasgupta A. (1993). *A History of Indian Economic Thought*, London, U.K : Routedge: 17.

Diwan, R and Lutz, M.(Eds.) (1985). *Essays in Gandhian Economics*. New Delhi, India: Gandhi Peace Foundation. Gandhi, M.K (1921), *The Collected Works of Mahatma Gandhi*. Government of India. New Delhi: Publication Division. Vol.19: 365.

Gandhi, M.K (1921; 1928). *Young India*, February.

Gandhi, M.K (1945). *Constructive Programme: Its Meaning and Place*, Ahmedabad, India: Navjivan Publishing House, pp. 20-21 .

Goel, S.K. (1993). *Gandhi on Industrial Relations*, New Delhi, India: Shipra Publications.

Gurukkal, R. (2012) 'Convergence of Marx and Gandhi: A Strategic Need Today'. *Social Scientist,* September – October, 64.

Huq, A.M . 'The Doctrine of Non-Possession: Its Challenge to an Acquisitive Society' in Diwan, R and Lutz, M(Eds.). *Op.cit*.

IGNOU Material (2011). Unit 6. 'Gandhian Perspective'. MPA 011. State Society and Public Administration.

Mazumedar, S. (2004). *Socio-Political Ideas of Mahatama Gandhi.* New Delhi, India: Concept Publishing House.

Parekh, B. (1995). *Gandhi's Political Philosophy: A Critical Examination*. New Delhi, India: Ajanta.

Parekh, B. (1989). *Colonialism, Tradition and Reform: An Analysis of Gandhi's Political Discourse*. New Delhi, India: Sage.

Parel, A. J. (Ed.) (1997). *Hind Swaraj and Other Writings*, New Delhi, India:

Cambridge University Press. Rao U.R and Prabhu R.K (Eds) (2009). *The Mind of Mahatma Gandhi.* Ahmedabad: Navjivan Publishing House:137.

Sethi, J.D. (1978). *Gandhi Today*. New Delhi, India:Vikas Publishing House:148.

Terchek, R. J. (2000). 'Gandhian Autonomy in the Late Modern World' in Anthony J. Parel (Ed.), *Gandhi, Freedom and Self Rule*, New Delhi, India:Vistaar.

Tikekar, I. (1970) . *An Analytical Study of Gandhian Thought*, Varanasi:Sarv Seva Sangh Prakashan:110.

2.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) आपके उत्तर में निम्न को शामिल होना चाहिएः

- ग्राम गणतन्त्र।
- स्वयं की सत्ता।
- व्यक्ति की स्वायत्ता।
- लोगों में सत्ता का आभास।
- सबल और क्षेत्रीय जीवन समूह।
- जन मानस के बीच सहभागिता।
- स्व-शासित स्थानीय समूह।
- गांधी के ग्राम स्वराज के स्वप्न को पंचायती राज संस्था के गठन के माध्यम से सच किया गया।

बोध प्रश्न 2

1) आपके उत्तर में निम्न को शामिल होना चाहिएः

- गांधी के ट्रस्टीशिप पे विचार, शोषण और असमानता के समाप्ति से जुड़े हैं।
- ट्रस्टीशिप के आधार पर गैर-शोषणवादी समाज की स्थापना की जा सकती है।
- इसका आधार भगवद् पुराण और भगवद् गीता में पाया जाता है।
- इसका अर्थ गैर–स्वामित्व है।
- सेवा और निःस्वार्थ, ट्रस्टीशिप के आधार हैं।
- पूँजीवादी आधार और समाज को समान समाज में परिवर्तित करना।
- सेवा और गैर-स्वामित्व न्यासिता का मुख्य आधार है।
- वर्तमान पूँजीवादी व्यवस्था को कृषि व्यवस्था में बदलना।
- निजी स्वामित्व की पहचान नहीं, जब तक कि जन कल्याण हेतु इसकी अनुमति न हो।
- अतः राज्य (सरकार) द्वारा लागू की गयी ट्रस्टीशिप में किसी भी व्यक्ति को अपने स्वार्थ के लिये निजी सम्पत्ति का अधिकार नहीं दिया जायेगा।
- न्यूनतम मजदूरी के साथ अधिकतम मजदूरी भी तय करना आवश्यक है।

2) आपके उत्तर में निम्न को शामिल होना चाहिएः

- विनोभा भावे ने इसे ट्रस्टीशिप विश्वास्तावृत्ति कहा। इसका अर्थ है जनता का विश्वास, व्यापारी वर्ग में।
- भावे के भूदान और ग्रामदान आंदोलन ने कुछ अंश तक ट्रस्टीशिप पर सफलता पायी।
- ग्रामदान आंदोलन का मुख्य उद्देश्य था गरीबी उन्मूलन।
- भावे के अनुसार, धन का अधिकार एक व्यक्ति द्वारा नहीं की जा सकता है।
- वे भूमि सुधार पर विश्वास करते थे और अतिरिक्त भूमि को गरीबों में वितरित करने का काम किया था उन्होंने।
- वस्तुओं का स्वामित्व न्यूनतम है अथवा पूरे समाज के पास है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY